

गाङ्गाधरी
सुगम विवाह-
पद्धति:



खेमराज
श्रीकृष्णदास
प्रकाशन
बम्बई

सत्यं शिवं सुन्दरम्

“श्रीरत्नगढ़ निवासी द्वादशमहानिबन्धकर्तृ स्वर्गीय पण्डित
श्रीचतुर्थीलाल गौड़ स्मृतिग्रन्थमालायाः अष्टमं पुष्पम्” ।

(८)

ॐ नमः शिवाय

माध्यन्दिन शाखीया

पारस्कर सूत्रानुसारेण

गाङ्गाधरी-

सुगम विवाह-पद्धतिः ।

(विस्तृतटिप्पणी-भाषाविधि सहिता)

‘श्रीराजस्थानराज्यान्तर्गत श्रीरत्नगढनिवासिना, गौडवंशावतंसेन, वशिष्ठगोत्रोद्भवेन,
शिवालोपाह्वेन, पण्डित श्रीकस्तूरीचन्द्र पौत्रेण, श्रीचतुर्थीलालात्मजेन गंगाधर
शमंणा तामड़ायतेन विपुल टिप्पण्यादिना भाषाटीक्या च संयोज्य
परिवर्द्धिता संशोधिता च ।’



मुद्रक एवं प्रकाशकः

छोनाराजा श्रीवृग्णदासा,

अध्यक्षः श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,

खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई - ४०० ००४.

संस्करण : जनवरी २०२०, संवत् २०७६

मूल्य : १४० रुपये मात्र।

© सर्वाधिकार : प्रकाशक द्वारा सुरक्षित

मुद्रक एवं प्रकाशकः

खेमराज श्रीकृष्णदासTM

अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

Printers & Publishers

Khemraj Shrikrishnadass

Prop: Shri Venkateshwar Press

Khemraj Shrikrishnadass Marg,
7th Khetwadi, Mumbai - 400 004.

Web Site : <http://www.khe-shri.com>

E-mail : khemraj@bharatmail.co.in

Printed by Sanjay Bajaj For M/s.Khemraj Shrikrishnadas

Prop.: Shri Venkateshwar Press, Mumbai-400004

at their Shri Venkateshwar Press,

22, Chintamani Industrial Estate, Ramtekdi, Pune-411013.

ग्रन्थकर्ता



पण्डित गङ्गाधर शर्मा गौड़ कर्मकाण्ड विशारद

“भूयादैदिकधर्मपालनपरः सत्कर्मकाण्डाम्बुधिः

शुद्धाचारविभूषणः श्रुतिधनः सौम्याकृतिर्बुद्धिमान् ।

जीर्णग्रन्थसमूहशोधनकलादक्षो वशिष्ठान्वया-

लंकारः शुभरत्नदुर्गवस्तिर्गोडाख्यगंगाधरः” ॥ १ ॥

“साहित्यसेवानिरतोऽल्पभाषी सत्कर्मकाण्डाम्बुधिसेतुरेषः ।

स्मिताननो दुर्गुणजालमुक्तो धर्मप्रियोऽस्ति द्विजजातिहीरः” ॥ २ ॥

जन्मतिथि :- श्रावण शुक्ला १५ गुरुवार सं. १९७१ वि.

समर्पणम्



“श्रीरत्नदुर्गस्थ—सुप्रसिद्धविदुषां, कर्मठागगण्यानां, याज्ञिकभूद्वन्धानां, कर्मकाण्ड-विशारदानां, कर्मकाण्डाचार्य—कर्मकाण्डकोचिद—कर्मकाण्ड भास्करश्रीतभूषणेत्युपा धि विभवितानां, द्वादशमहानिवन्धकर्तृणां, प्रातः स्मरणीयानां, परमपूज्यानां पितृचरणानां, श्रीवत्तां स्वर्गीय पण्डित श्री चतुर्थोलाल शर्मगौड़ानां परमपञ्चिन्न चरणकमलेषु पुण्यस्मृती सादरं समर्प्यते ।”

“त्वदीयं वस्तु हे तात !
तुम्हेव समर्पये ।”

“पिता स्वर्गः पिता धर्मः पिता हि परमं तपः ।
पितरि प्रीतिमापन्ने प्रीयन्ते सर्वदेवता:” ॥

भवदीयात्मजः—
गङ्गाधर शर्मा गौड़ तामड़ायतः ।

नम्र निवेदन

आज के इस तथा कथित प्रगतिशील युगमें भी द्विजों में “उपनयनसंस्कार” तथा – “विवाहसंस्कार” प्रायः विधिपूर्वक एवं शास्त्रविहित पद्धति से होते हैं। उक्त दो संस्कारों में भी विवाहसंस्कार प्रधान है। मगर आजतक विवाहपद्धतिका कोई शुद्ध एवं शास्त्रशुद्ध विस्तृत टिप्पणी एवं सरल भाषा विधिसहित प्रामाणिक संस्करण प्रकाशित नहीं हुआ था। उक्त अभाव की पूर्ति के लिए हमने एक “स्मृतिग्रन्थमाला” की रचना की है जो “रत्नगढ़निवासी कर्मठाचार्य स्वर्गीय पण्डित श्रीचतुर्थालालगोड़ स्मृतिग्रन्थमाला” के नाम से है, उसके कई पुष्प तो प्रकाशित हो चुके हैं जो “श्रीवेंकटेश्वर प्रेस-बंबई” से प्रकाशित हुए हैं।

उनमें – “चातुर्थालाली विवाह पद्धतिः सटिप्पणिका” प्रथम पुष्प है। उसके द्वारा व्याकरण जानने वाला ही विवाह कार्य सुगमता से करा सकता है, लेकिन कम पढ़े हुये या हिन्दीमात्र जानने वाले पुरोहित (कर्मकाण्डी) कार्य नहीं करा सकते। इसलिये उसी कमी को देखकर – “गाङ्गाधरीसुगम विवाहपद्धति भाषाविधि सहिता” का निर्माण किया है। इस पुस्तक को हाथ में लेकर सर्वसाधारण संस्कृत का अनभिज्ञ पुरोहित (कर्मकाण्डी) भी अच्छी तरह से विवाह कर्मको सुसम्पन्न करा सकता है।

केवल इसी एक पुस्तक को पास में रखने से विवाह सम्बन्ध अन्य पुस्तक की आवश्यकता ही नहीं रहेगी। यह गागर में सागर सदृश है।

इस परिवर्तित नवीन संस्करण में स्थल-स्थल पर अति उपयोगी विस्तृत टिप्पणी भी दी गई है। पूजाक्रम भी सुन्दर प्रकार से संक्षेप में ही दिया गया है और भी विवाह संबंधी-लीकिक रीति भी जहाँ-तहाँ लिखी गयी है जिसका ज्ञान पुस्तक पढ़ने से ही हो सकता है।

“चातुर्थीलाली उपनयन-पद्धतिः, उपाकर्म-पद्धतिः; तो प्रकाशित हो चुकी हैं – वास्तु-शान्ति-पद्धतिः – शतचण्डोविधानपद्धतिः सटिप्पणिका एवं गाङ्गाधरी बृहन्मूलादिशान्ति-पद्धतिः विस्तृतटिप्पणी भाषा विधिसहिता, आदि पुष्प भी जल्दी ही प्रकाशित होंगे।

“गांगाधरी मंगलागौरीन्नतकथा विस्तृत टिप्पणी-भाषाविधिसहिता” का प्रकाशन तो लक्ष्मीनाथ प्रेस फतेहपुरमें हो गया है।

यदि यह नवीन संस्करण सहृदयपाठकों को उपादेय और रुचिकर मालूम होगा तो मैं अपना परिष्रम सफल समझूँगा।

इस नवीन संस्करणमें मानवस्वभाववश अथवा प्रमादवश कोई त्रुटि रह गई हो तो विद्वान् लोग क्षमा करेंगे और उसकी सूचना देंगे ताकि दूसरे संस्करण में उसका संशोधन कर दिया जावे। भूमिका लेखक श्री नन्दकुमारजीशास्त्री एम० ए० का भी कृतज्ञ हूँ जो कि इतना परिष्रम करके भूमिका लिखी। इस ग्रन्थ के प्रथम-द्वितीय एवं तृतीय संस्करण के प्रूफ संशोधन, परिष्करण व परिवर्द्धन में पं० श्री जीवानन्द जी ‘आनंद’ विद्यावाचस्पति सिद्धान्तालंकार का जो योगदान रहा है इसके लिए मैं सादर आभार व्यक्त करता हूँ।

“गच्छतः स्खलनं वापि भवत्येव प्रमादतः।

हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादघति सज्जनाः” ॥

चतुर्थीलाल गौड़ भवन
वैशाख शुक्ला ३
सं० २०१८

}

विद्वज्जन छुपाकांक्षी—
गाङ्गाधर शर्ली गौड़, तालडायतः,
रत्नगढ़ (राजस्थान)

भूमिका

सुदूर अतीतकालमें भव्य भारतवर्ष समस्त विश्वका पथप्रदर्शक था उसके आचार-विचारों का अनुकरण करने में भूतल के समस्तदेश अपना अहोभाग्य भानते थे। इसकी संस्कार प्रधान संस्कृति की दिव्य ज्योति से अपना अज्ञानान्धकार दूरकर इसकी प्रशंसा के गीत गते अघाते नहीं थे।

“अहो भुवः सप्त समुद्रवत्या, द्वीपेषुवर्षेष्वधिपुण्यमेतत् ।” (शाल० ५-६-१३) अर्थात् सात समुद्रोंवाली इस पृथ्वी के समस्त द्वीपों और वर्षों में भारतवर्ष अत्यन्त पवित्र स्थान है।

“सितासिते सरिते यत्र सङ्गस्तत्राप्लुतासो दिवमृत्पतन्ति”। (ऋग्० खिल)

अर्थात् वैदिक और वैदिकेतर दोनों धारायें जिसमें समन्वित होती हैं उस भारतीय संस्कृतिकी धारामें स्नान करनेवाले दिव्य प्रकाशको प्राप्त होते हैं।

इतना ही नहीं “एतद्वेशप्रसूतस्य०” का ही भावानुवाद करते हुये राष्ट्रीय कवि श्री गुप्तजी लिखते हैं कि :—

“संसार को पहिले हमीने ज्ञान भिक्षादान की ।

आचार की, व्यवहार की, व्यापारकी, विज्ञान की ।”

हमारे इस वास्तविक उद्घोषका आधार आचारनिष्ठा और संस्कार प्राक्षान्य जीवन था। वैदिक गूह्य कर्मकाण्ड में प्रमुख स्थान जन्म से (अथवा गर्भाधानसे) मृत्युपर्यन्त किये जाने वाले अनेकानेक संस्कारों का है।

“संस्करणम् संस्कारः” अथवा — “सम्यक् करणं संस्कारः” यद्वा—“संस्क्रियतेऽनेन देहो मनः आत्मा वेति०” संस्कार की शान्तिक व्युत्पत्ति है। सभ् उपसर्कं “कृ” प्रकृति के घन् प्रत्यय होने पर संस्कार शब्द की निष्पत्ति होती है।

पूर्वरूपमें विद्यमान पदार्थों का दोष निवारणकर उनमें गुणों का प्रतिष्ठान ही संस्कार का मूल लक्ष्य है। अपरिष्कृत को परिष्कृत कर उसमें नवीनता व विशेषता लाने के लिये संस्कार परम आवश्यक है।

प्राणिजीवनशास्त्र और जनन-विज्ञान आदि विद्वानों वे; अनुसन्धानों के कारण अब गर्भाधानादि संस्कारों के महत्व को सिद्धान्त रूपसे स्वीकार किया जाने लगा है। साधारण से पौधे के पालन-पोषण में जितना व्यान दिया जाता है, स्पष्टतः मनुष्यके जीवन की देखभाल में उससे कहीं अधिक ध्यान देनेकी आवश्यकता है। यही तो अधिकतर संस्कारों का अभिप्राय है। “वैदिकः कर्मभिः पुण्यैनिषेकादिद्व्यजन्मनाम् । कार्यः शरीर संस्कारः पावनः प्रेत्य चेह च ॥” २।२६ । मनु का स्पष्ट आदेश है। संपूर्ण संस्कारों में विवाह संस्कार सर्वप्रधान है। विवाह प्रथा विश्वके समग्र देशों में पाई जाती है, किन्तु इस विषय-पर हमारे पूर्वजनोंने जितना-गहन मनन करके विवाह पद्धति प्रचलित की वह अनुपम है। विवाह केवल विषय भोग का

साधन नहीं अपितु सर्वतोमुखी विकासका साधन है। संयमित जीवन-यापन करते हुये पितृ-ऋण से विमुक्ति का उपादान है। विधिपूर्वक या अविधिपूर्वक, समझकर या बिनासमझे, आज भी हमारे घरों में वैदिक धारा के आधार पर विवाह संस्कार कराया जाता है। सहस्रों वर्षों की परंपरा आज भी चल रही है, भारत के किसी एक या दो प्रान्तों में नहीं, किन्तु समस्त भारत में यह साधारण बात नहीं है।

विवाह-पद्धति की यह देन जो भारत जैसे विशाल देश को एक ग्रन्थन में बाँधे हुये हैं, कितनी बड़ी है कितनी अद्भुत है। विवाह, गृहस्थ जीवनके पूर्ण उत्तरदायित्व को समझनेवाले दम्पती के लिये, जीवन संघर्ष में राष्ट्र की सेवा में प्रवृत्त और प्रविष्ट होने का एक महान् प्रतीक है। आत्मा और आत्मा का संमिलन है। संसार की जीवन यात्रा में एक साथ मिलकर चलने वाले समान शीलगुणवय वाले दो प्रेमपथिकों का समझौता पत्र है। सद्गृहस्थी बनने का आज्ञापत्र है।

वेद कहता है—“जायेदस्तम्” (३।५२।४) स्त्रीका ही नाम घर है।

शतपथब्राह्मण में लिखा है—“अर्धोह वा एषु आत्मनो यज्जाया। यावज्जायां न विन्दतं” अर्थात् हि तावद् भवति” (५।२।१।१०) अर्थात् स्त्री पुरुषका आधा भाग होता है। जब तक पुरुष स्त्री को नहीं पाता है तब तक वह अपूर्ण ही रहता है।

भारतीय विवाह संस्कार कई प्रकार से अपनी विशेषता रखता है। पाणिग्रहण, बह्नि-प्रदक्षिणा, सप्तपदी, लाजहोस इस संस्कार के प्रधान अङ्ग हैं। जीवन के इस गम्भीरतम अवसर पर वधू का पाणिग्रहण करते हुए आज भी वर कहता है—

“गृणामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदच्छिर्यथाऽऽसः।

भगो अर्यमा सविता पुरन्विमंष्यं त्वा दुर्गाहंपत्याय देवाः॥

(ऋग १०।८५।३६)

अर्थात् सौभग्य की समृद्धिके लिये मैं तुम्हारे हाथ को पकड़ता हूँ, जिससे हम दोनों पूर्णायुष्य को प्राप्त कर सकें। भग, अर्यमा और दानशील सचित्तदेवता प्रसाद रूपमें तुम्हें गृहस्थ धर्म के पालन के लिये मुझे दिया है। आज भी वर-वधू एक-दूसरे से प्रतिक्षा करते हैं:—

“मम व्रते ते हृदयं दधामि, मम चित्तमनुचितं ते अस्तु। मम वाचमेकमना जुषस्व प्रजापतिष्ठत्वा नियुनक्तु मह्यम्” ॥ (पा० २० श० ११८) अर्थात् तुम्हारा हृदय मेरे व्रत के अनुकूल हो। तुम्हारा चित्त मेरे चित्त के अनुकूल हो। मेरे कथन को प्रेमसे एकमत होकर सुनो। भगवान् प्रजापति तुमको मेरे अनुरक्त करें।

यथा ही सुन्दर भावना है—“यदेतद् हृदयं तव तदस्तु हृदयं मम यदिदं हृदयं मम तदस्तु हृदयं तव ॥ (मन्त्र ब्राह्मण १।३।९) अर्थात् यह जो तुम्हारा हृदय है वह मेरा हृदय हो जाये। यह जो मेरा हृदय है वह तुम्हारा हृदय हो जाये। कितनी उदात्त परम्परा से मिलन की आत्मसमर्पण की विचारधारा है।

वैवाहिक जीवन की सफलता के लिये जिन जिन बातों की आवश्यकता है। उन सबका बड़ा हृदयाकर्षक वर्णन सप्तपदीके मन्त्रों में आ जाता है। वर वधू से वैवाहिक जीवन के लक्ष्य

इन मंत्रों द्वारा क्रमशः बतला रहा है; (१) अन्नादि आवश्यकसामग्री, (२) बल, (३) आर्थिक सम्पत्ति, (४) सुख और मनः प्रसाद, (५) सन्तान पालन, (६) दीर्घयिष्य (७) परस्पर प्रेम।

एक सुखमय सफल गृहस्थ जीवन का इससे अधिक सुंदर चित्रण नहीं हो सकता। इसी प्रकार हवन के समय भी परम प्रभु से त्रिविध शक्ति के विकास के साथ जीवन संग्राम में सफलता की याचना की जाती है। हमारी विवाहपद्धति का यह तो एक स्वरूप दिग्दर्शन मात्र है। इस संस्कार की उत्कृष्ट आदर्श दृष्टि का यह केवल एक उदाहरण मात्र है। आज मुद्रण की सामान्य सुविधा होने पर भी जहाँ अन्य विषयों के संस्करण पर संस्करण निकल रहे हैं, वहाँ पर संस्कारों के प्रतिपादक कर्मकाण्ड के जंजाल में वे आवश्यक एवं उपादेय सामग्री लेकर उनको शास्त्र विहित विधि के अनुरूप प्रणयन करने के कार्य का सत्संकल्प “रत्नगढ़निवासी द्वादश-महानिवन्धप्रणेता कर्मठाचार्य—कर्मकाण्डकोविद पण्डित श्री चतुर्थीलालजी गौड़” ने लिया था। अपने जीवन पर्यन्त वे इस सत् साधनमें रत रहे और अपनी सार ग्राहिणी प्रतिभा के द्वारा वे जो महान् कार्य कर गये हैं, वह सदैव चिरस्मरणीय रहेगा। उन्हीं के उस अपूर्ण कार्य को उन्हीं के सुपुत्र “आत्मा वै जायते पुत्रः” इस वाक्य के मूर्तरूप “श्री गङ्गाधरजी गौड़” अविचल निष्ठा और अनवरत अध्यवसाय से कर रहे हैं।

पण्डितजी के अपने सुयोग्य पिता की नीर-कीर-विवेचिनी साराहिणी प्रतिभा उत्तराधिकार के रूप में मिली है। इसी लिये ये व्यस्त जीवन में भी अल्प संस्कृतज्ञ कर्मकाण्डियों के करकमलों में “रत्नगढ़निवासी स्वर्गीय पण्डित श्री चतुर्थीलाल गौड़ स्मृतिश्रन्धरात्मा” के मनोहारी नवल रसमय पुष्प सर्मिष्ट करते जा रहे हैं। उसी स्मृति ग्रन्थमाला के पुष्पों में से “गाङ्गाधरी विवाह पद्धतिः” अनुपमेय है। विद्वान् संकलनकर्त्ताने इस पद्धति में उतनी ही और वे ही बातें प्रस्तुत की हैं जो आवश्यक हैं।

टिप्पणी के द्वारा किसी की शंका व तर्कका शास्त्रविहित प्रमाण देकर अन्यत्र परिश्रम के लिये स्थान ही नहीं छोड़ा है। गागरमें सागर, विन्दुमें सिन्धु समादेने का आपका प्रयास स्तुत्य है।

मुझे विश्वास है कि विवाह संस्कार संपादन के लिये यह पुस्तक पथनिर्देशक का काम करेगी और कर्मकाण्डजीवी पुरोहितादि वर्ग के लिये तो वह आवश्यक ग्रन्थ होगी ही अन्य जिज्ञासु तथा विद्वान् पाठक भी इससे लाभान्वित होंगे और पण्डितजीकी सेवा का समुचित आदर करेंगे।

चिह्नाश्रव :-

रत्नगढ़ }
९-४-६१ }

साहित्यरत्न नन्दकुमार शास्त्री एम० ए०, प्रभाकर,
भूतपूर्व प्रधान हिन्दी संस्कृताध्यापक श्री रघुनाथ
वहूदेशीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय —
रत्नगढ़ (राजस्थान)
प्राचार्य कृष्णकुल ब्रह्मचर्याश्रम लक्ष्मणगढ़ (सीकर)

दो शब्द

सुगम विवाह पद्धति के द्वितीय संस्करण के अभिनव प्रकाशन पर दो-शब्द प्रकट करते हुए मुझे अतीव आळ्हाद हो रहा है, इस पुस्तक का प्रथम संस्करण आशा के अनुकूल विद्वत् समाज में समादृत होने के कारण स्वत्प काल में ही समाप्त हो गया है, प्रथम-संस्करण के जिन स्थलों के विषय में विद्वान् मित्रों से मुझे जो उचित परामर्श मिले थे उन स्थलों पर आवश्यक संशोधन एवं परिवर्द्धन कर इस द्वितीय संस्करण को विद्वद् समुदाय के लिए उपादेय बनाने का सब प्रयास किया गया है, यत्र-तत्र पाद टिप्पणी में भी अभिवृद्धि कर शास्त्रीय प्रामाणिकता को और स्पष्ट किया गया है।

विवाह संस्कार हिन्दू पोडस संस्कारों में सर्वाधिक महत्ता रखता है, हमारे शास्त्रकारों ने इस संस्कार को सामाजिक कर्तव्य ही नहीं अपितु धार्मिक कृत्य भी माना है, विश्व के सभी मनुष्य विवाह विधान के माध्यम से पति-पत्नी के रूप में आवद्ध होते हैं भले ही विवाह संपन्न की प्रक्रियाएँ भिन्न-भिन्न हों। हिन्दू समाज में अनादि काल से विवाह-संस्कार एक प्रमुख नियामक तत्त्व रहा है और आज भी है। इस संस्कार की सामाजिक व धार्मिक उमिका होने के कारण व्यष्टि और समष्टि के आचरणों में मर्यादा की परिधि रहती आई है। विवाह संस्कार का यह स्वरूप हिन्दू समाज में आरम्भिक काल से चला आ रहा है। क्योंकि व्यवस्थित एवं विज्ञान सम्मत हुए विना हिन्दू संस्कृति व सभ्यता अब तक जीवित नहीं रहती अपितु यह भी अन्य कई समाजों की तरह कभी भी काल कल्पित हो जाती। हमारे शास्त्रकारों ने पति-पत्नी के संबंध को अत्यन्त पावन और अविच्छिन्न माना है, इसलिए अतिरिक्त विवाह-संस्कार को यज्ञसम माना गया है जैसा कि तैत्तिरीय ब्राह्मण में आता है “अयज्ञियो वा एव यो पत्नीक” मर्हिय पाणिनि की भी यही मान्यता है, उन्होंने विवाह को यज्ञ के संयोग की बात कही है “प्रत्येनोयज्ञ-संयोगे” मनु महाराज भी विवाह को यज्ञ के सम बतलाते हुए कहते हैं कि—

यज्ञेतु वितते सम्यगृत्स्वजे कर्म कुर्वते ।

अलंकृत्य मुतादानं दैवं धर्मः प्रचक्षते ॥

अतः हिन्दू समाज में विवाह संस्कार के लिए दी गई महत्ता शास्त्र सम्मत है और यह निर्विवाद सत्य है कि ‘हिन्दू विवाह विधान’ की जो प्रक्रिया है वह मनोवैज्ञानिक होने के कारण श्रेष्ठतम् है।

विद्वद् बन्धुओं से मैं यह आशा रखता हूँ कि वे सुगम विवाह पद्धति के इस द्वितीय संस्करण को अपना कर भेरे प्रयास को सार्थक करेंगे। शुभं भवतु ।

चतुर्थीलाल गौड़ भवन
रत्नगढ़ }
अनंत चतुर्दशी सं. २०३० वि. }
}

भवनिष्ठ :-

गङ्गाधर शर्मा गौड़, कर्मकाण्ड विशारद

तृतीय संस्करण पर सम्पादकीय-कथन

भगवान आशुतोष की महती अनुकम्पा से “सुगमविवाह पद्धति” का यह तृतीय संस्करण पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अतीव प्रसन्नता की अनुभूति हो रही है।

हमारे कृषियों ने मनुष्य जीवन को घोड़श संस्कारों से अनुबन्धित किया है। इन घोड़श संस्कारों में विवाह संस्कार अपने आप में अत्यन्त महत्व रखता है। विवाह संस्कार की शास्त्रीय विधि विद्यान से सम्पन्नता होने पर ही उसकी सफलता मानी गई है। आश्रम मर्यादा के अनुसार भी गृहस्थाश्रम को ही सर्वोपरि माना गया है, गृहस्थाश्रम का शुभारम्भ विवाह संस्कार की सम्पन्नता के साथ होता है, सुगम विवाह पद्धति को वेद गृह्यसूत्र ब्राह्मणग्रन्थ, स्मृतिग्रन्थ आदि हिन्दू धर्म के प्रमाण भूत ग्रन्थों के आधार पर बनाया गया है, इसके विधि विद्यान को इतना सरल और मुदोद्ध बनाया गया है कि एक साधारण विद्वान् भी बिना किसी कठिनाई के विवाह संस्कार को सम्पन्न करा सकता है। यही कारण है कि स्वल्पकाल में ही सुगम विवाह पद्धति का यह तृतीय संस्करण प्रकाशित होने जा रहा है, बहुत से विद्वानों के प्रसंशा भरे पत्र सुगम विवाह पद्धति के विषय में मेरे पास आये हैं इससे मैं अपने प्रयास को सार्थक समझता हूँ। यह निर्विवाद सत्य है कि सुगम विवाह पद्धति अत्यन्त लोकप्रिय सिद्ध हुई है। इस संस्करण में अन्य आवश्यक परिवर्तन व परिवर्द्धन गृह्यसूत्रों के आधार पर किये गये हैं तथा गत संस्करण में प्रेस की रही हुई भूलों को भी सुधार दिया गया है।

सुगम विवाह पद्धति के प्रणयन में—कर्मकाण्ड भास्कर श्रौत-भूषण, द्वादश महानिवन्ध प्रणेता स्वनाम धन्य पुण्यश्लोक पितृचरण पूज्यश्री पं० चतुर्थीलालजी गोड़ की जात व अज्ञात व्रेरणाएँ मेरी दिशा निर्देशक रही हैं अतएव इस सुअवसर पर मैं उस महान् ब्रह्मलीन आत्मा को अपनी प्रणामाङ्गलि अर्पित करना अपना पावन कर्तव्य समझता हूँ।

चतुर्थीलाल गोड़ भवन
रतनगढ़
गुरु पूर्णिमा २०३५ वि.

भवनिष्ठ :—
गङ्गाधर शर्मा गोड़
कर्मकाण्ड विशारद

विवाहपद्धत्यनुक्रमणिका

विषयः	पृष्ठम्	विषयः	पृष्ठम्		
मङ्गलाचरणम्	...	१	सप्तपदाक्रमणम्	...	५१
शान्तिपाठ मन्त्राः	...	३	अभिषेकः	...	५३
प्रायश्चित्त संकल्पः	...	५	सूर्य ध्रुवयोरीक्षणम्	...	५४
प्रधान संकल्पः	...	६	हृदयालम्भः	...	५४
कलशाचनम्	...	७	कन्यावचननानि	...	५५
दीपपूजनम्	...	८	सिंदूरदानम्	...	५७
गणयागः	...	८	स्वप्नकुद्दोमः	...	५८
गणपति पूजनम्	...	९	पूर्णपात्रदानम्	...	५८
स्वस्ति पुण्याह वाचनम्	...	१०	बहिर्होमः	...	५९
मातृकापूजनम्	...	१२	ऋग्युषकरणम्	...	५९
सूर्यादिग्रह पूजनम्	...	१३	भूयस्या दक्षिणायाः संकल्पः	...	५९
कलशस्थापन प्रयोगः	...	१४	देवतानि विसर्जनम्	...	६०
कलशाभिमन्त्रणम्	...	१७	वरवच्छोस्त्रिरात्र नियमाः	...	६१
कलश प्रार्थना	...	१७	चतुर्थीकर्म	...	६१
रक्षाविधानम्	...	१७	सांकल्पिक नान्दीशालम्	...	६६
विवाह विधानम्	...	१९	मङ्गलाष्टकम्	...	७३
मधुपक्ष पूजनम्	...	२२	मात्राशाखोच्चारश्चतुष्कम्	...	७४
अग्निस्थापनम्	...	२४	वंशगोत्रोच्चारणम्	...	७९
वस्त्रपरिधानम्	...	२५	आमंत्रण इलोकाः	...	८०
कन्यादानम्	...	२८	आशीर्वादात्मक पदानि	...	८२
कन्यादान संकल्पः	...	३१	संक्षेपतो गोत्र प्रवर निर्णयः	...	८४
परस्पर निरीक्षणम्	...	३२	आदि गौड नामणों के गोत्र व शासन	...	९२
ब्रह्मादि वरण संकल्पः	...	३३	विवाह संबंधी आवश्यक वाते	...	९८
कुशकण्डिका	...	३४	विवाह सामग्री	...	१०१
सर्वप्रायश्चित्त होमः	...	३९	सूर्य-गुरु-चन्द्र पूजादान सामग्री	...	१०२
राष्ट्रभूदोमः	...	४०	संकल्पश्च	...	१०२
जयहोमः	...	४२	ग्रन्थकारस्य सप्तपुरुषात्मकः	...	
अम्यातान होमः	...	४२	कल्पतरः	...	१०५
पञ्चाहृतयः	...	४५	स्व० पं. श्री चतुर्थीलालजी गौड़	...	
शाखोच्चारणम्	...	४६	कृत ग्रन्थरत्नानि	...	१०६
लाजहोमः	...	४६	पं. श्री गंगाधरजी गौड़ कृत	...	
सेवरादानम्	...	४९	ग्रन्थ रत्नानि	...	१०७

ॐ नमः शिवाय ।

३८. गर्णिकानां -

माध्यन्दिन शाखीया

सुगम विवाह-पद्धतिः



“अग्जाननपद्भार्क गजाननभर्निशम् ।

अनेकदं तं भवतानामेकदन्तमुपास्यहे ॥”

विवाह दिन से पूर्व तृतीय, षष्ठ^१, नवम दिन को त्याग कर विवाह नक्षत्र^२में या शुभ दिन में स्व स्व गृह में कन्या बर के तैल हरिद्रारोपन अर्थात् हलदी हाथ आदि करावे ।

विवाह के दिन वा पहले दिन अपने-अपने घर में कन्यापिता और बरपिता स्त्रीसहित कन्या पुत्र के साथ मङ्गलस्नान करे । शुद्ध नवीन वस्त्र तिलक आभूषणादिसे विभूषित होके गणेश मातृका-पूजन—नान्दीश्वाद^३ करे ।

शेष दिनमें सोलह या बारह या दश या अष्ट हस्त परि-

१ “न पूर्वमिदमाचरेत्रिनवषष्मिते वासरे ।” इति निषेधात् ।

२ संस्कारभास्करे च—यराहः—“कार्यं विवाहकार्याङ्गं विवाहोदित भजनेऽ । विवलं च विघ्नं हित्वा त्रिषष्ठ नवमं दिनम् ॥ हेरम्ब पूजनं तैलहरिद्राचांकुरार्पणम् । पेषणं कंडनाद्यं च वेदिका मण्डपादिकम् ॥”

३ सूहृत्प्रकाश—“रोहिष्युत्तरेवत्यो मूलं स्वाति मृगोमधा । अनुराधा च हस्तश्च विवाहे मङ्गलप्रदाः ॥”

४ सं० गणपती—“एकविशत्यहर्यजे विवाहे दशवासराः । त्रिषट् चौलोपनयने नान्दीश्वादं विधीयते” ॥

माण का मण्डप^१ चतुर्द्वारि सहित ब्रनाकर उसमें एक^२ हाथकी चौकुंटी (चतुरल्ल) वेदी पूर्वको नीची करती बनावे । उसको हलदी, गुलाल, गोधूम, चून आदि से सुशोभित करे । हवनवेदी के चारों तरफ काठकी चार खूंटी गाड़े, उन्हींके बाहर सूत लपेटे, एक २ दीवा (कच्चा बारूदड़ा) पास में धरे । कन्या, सिंह,^३ तुला, ये संक्रान्ति होवें तो “ईशान” में प्रथम खूंटी रोपे । वृश्चिक, धन, मकर संक्रान्ति में “वायव्य” में प्रथम खूंटी रोपे । मीन, मेष, कुम्भ संक्रान्ति में “नैऋत्य” में प्रथम खूंटी रोपे । वृष, मिथुन, कर्क संक्रान्ति में “अग्निकोण” में प्रथम खूंटी रोपे ।

एक काठके पाटेके ऊपर गणेश, षोडशमातृका, नवम्प्रह्न आदि स्थापन करे । ईशानकोणमें कलश स्थापन करे । रक्षार्थ घृत का दीपक रखे और अपने दक्षिण भागमें पूजा सामग्री रख लेवे । विवाह के समय कन्यापिता स्नान^४ करके शुद्ध नवीन वस्त्र पहन कर उत्तराभिमुख^५ होकर आसन पर बैठे । वर तो पूर्वाभिमुख^६ बैठे ।

१ पञ्चरात्रे—“कनीश्रान् दशहस्तः स्यान्मध्यमो द्वादशोन्मितः । तथा पोडश-भिंहस्तैमण्डपः स्यादिहोत्तमः” ॥

२ संस्कार दीपके—“उपलिप्ते महीपृष्ठे चतुर्विशाङ्गुलायता । वेदी वैवाहिकी कार्या चतुरङ्गुलमुच्छ्रता” ॥

वेदी स्वरूपं मनुराह—“सर्वत्र वेदी चतुरङ्गुलोच्छ्रता विनिर्मिता सैकतमृति-कादिभिः । द्विधा तु सा केवल वेदिकात्मिका परायुता स्तम्भ चतुष्टयेन या” ॥

३ “सूर्येऽग्नासिंहघटेषु शैवे स्तम्भोलिकोदण्डमृगेषु वायी । मीनाजकुम्भे नित्रहंती विवाहे स्थाप्योऽग्निकोणे वृषयुग्मकक्षे” ॥

वास्तुरत्नावलौ—“वृषमादि त्रये वेद्यां सिंहादि गणयेद् गृहे । देवालये च मीनादि तडागे मकरादिकम्” ॥

४ वृद्धयाज्ञवल्यः—“ग्रहणोद्वाहसंक्रान्तियात्रातिप्रसवेषु च । स्नानं नैभित्तिकं ज्येयं रात्रावपि तदिष्यते” ॥

नागदेव :—“बस्नातस्य क्रियाः सर्वा भवन्ति निष्फलायतः । प्रातः समाचरेत्स्नानं तच्च नित्यमुपस्थितम्” ॥

५ पराशरः—“उद्भमुखोऽर्जयेदाता वेदिस्थं प्राङ्मुखं वरम् ।”

संस्कार भास्करे च—“सर्वत्र प्राङ्मुखो दाता प्रतिग्राही उद्भमुखः । एष एव विधिर्यत्र कन्यादाने विपर्ययः” ॥

६ व्यासस्मृतौ—“प्रत्यङ्गमुखं स्थापयेत् देवं पूज्यं वरं विना ।

वरस्तु प्राङ्मुखः पूज्यः पूजकः स्यादुद्भमुखः ॥”

कुंकुम का तिलक कर अपने दक्षिण हस्त की अनामिका^१ में सुवर्ण की अंगूठी पहन कर आचमन प्राणायाम कर “आनोभद्रा” आदि शान्तिपाठ करे ।

शान्तिपाठमन्त्रः—

हरिः—“ॐ आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्द्वासोऽयपरी-तासऽउद्ध्रिदः । देवा नो यथा सदमिद् वृद्धेऽसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे ॥ १ ॥ देवानां भद्रा सुमतिर्त्तजूयतान्देवाना ७ राति रभि नो निर्वर्तताम् । देवाना ७ सख्यमुप सेदिमा व्वयन्देवा न आयुः प्र तिरन्तु जीवसे ॥ २ ॥ तान्पूर्व्या निविदा हूमहे व्वयम्भ-गम्मित्रमदितिन्दक्षमस्तिधम् । अर्यमणं व्वरुण ठं० सोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ॥ ३ ॥ तन्नो व्वातो मयोधु व्वातु भेषजन्तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः । तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयो-भुवस्तदश्विना शृणुतन्धिष्या युवम् ॥ ४ ॥ तमीशानञ्जगत-स्थुषस्प्तिन्धियञ्जिन्वमवसे हूमहे व्वयम् । पूषा नो यथा व्वेद-सामसद्वृद्धे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ ५ ॥ स्वस्ति न इन्द्रो व्वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्ताक्ष्योऽअरिष्ट-नेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥ ६ ॥ पृषदश्वा मरुतः पृश्नि-मातरः शुभ्यं य्यावानो विदथेषु जग्मयः । अग्निजिह्वा मनवः सूर-चक्षसो व्विश्वे नो देवाऽ अवसाऽ गमन्निह ॥ ७ ॥ भद्रज्जकर्णभिः शृणुयाम देवा भद्रम्पश्येमाक्षभिर्यजत्वाः । स्थिरैरज्जस्तुष्टुवा ७ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं य्यदायुः ॥ ८ ॥ शतमिन्नु शरदोऽ अन्ति देवा यत्रानश्चक्रा जरसं तनूनाम् । पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषताऽयुर्गन्तोः ॥ ९ ॥ अदितिद्यौरदितिरन्त-रिक्षमदितिर्मता स पिता स पुत्रः । व्विश्वे देवाऽअदितिः पञ्च

^१ अत्रिस्मृतौ — “अनामिकामूलदेशो पवित्रं धारयेद् द्विजः” ॥

हेमाद्री — “अन्यानि च पवित्राणि कुशद्वार्त्मकानि च । स्वर्णत्मक पवित्रस्य कलां नाहन्ति षोडशीम्” ॥

जनाऽअदितिज्जातमदितिज्जनित्वम् ॥ १० ॥ तम्पत्नी भिरनु गच्छे
देवाः पुत्रैर्भातृभिरुत वा हिरण्यैः । नाकं गृभ्णानाः सुकृता
लोके तृतीये पृष्ठेऽधिरोचने दिवः ॥ ११ ॥ आयुष्ये व्वच्चर्वं
ठं० रायस्पोषमौद्ध्रिदम् । इदं ठं० हिरण्यं व्वच्चस्व ज्जैत्राया विशत्
दुमाम् ॥ १२ ॥ द्वौः शान्तिरन्तरिक्षं ठं० शांतिः पृथिवी शांतिरा
शांतिरोषधयः शांतिः । व्वनस्पतयः शांतिर्विश्वेदेवाः शांतिर्ब्रह्म शांति
सर्वं ठं० शांतिः शांतिरेव शांतिः सा मा शांतिरेधि ॥ १३ ॥ य
यतः समीहसे ततो नोऽअभयड्कुरु । शब्दः कुरु प्रजाभ्योऽभय
पशुभ्यः” ॥ १४ ॥ ॐ शान्तिः शान्तिः सुशान्तिर्भवतु । सर्वार्था
शान्तिर्भवतु । प्रारब्धे कर्मणि निर्विघ्नतास्तु ।

“ॐ श्रीमन्महागणाधिपतये नमः । ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यः
नमः । ॐ उमामहेश्वराभ्यां नमः । ॐ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः
ॐ शचीपुरन्दराभ्यां नमः । ॐ माता पितृचरणकमलेभ्यो नमः
ॐ कुलदेवताभ्यो नमः । ॐ इष्ट देवताभ्यो नमः । ॐ ग्रामदेवताभ्यः
नमः । ॐ स्थान देवताभ्यो नमः । ॐ वास्तुदेवताभ्यो नमः
सूर्यादिग्रहेभ्यो नमः । ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः । ॐ सर्वेभ्यो ब्राह्म
णेभ्यो नमः । ॐ सर्वेभ्यस्तीर्थेभ्यो नमः । ॐ सर्वाभ्यशक्तिभ्यः
नमः । ॐ पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु । ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च
कपिलो गजकर्णकः । लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ॥५॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः । द्वादशैतानि नामानि
पठेच्छृणुयादपि ॥ २ ॥ विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ॥ ३ ॥ शुक्लाम्बरधरं देवं शारी
वर्णं चतुर्भुजम् । प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ॥ ४ ॥ अर्था
प्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः । सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाभ्यः
पतये नमः ॥ ५ ॥ सर्वमङ्गल माङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके । शर्व
ऋग्म्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते ॥ ६ ॥ सर्वदा सर्वकाय
नास्ति तेषाममङ्गलम् । येषां हृदिस्थो भगवान् मङ्गलायतनं हृ
॥ ७ ॥ लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः । येषामिन्दीवर श्या-

हृदयस्थो जनार्दनः ॥ ८ ॥ विनायकं गुरुं भानुं ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान् ।
सरस्वतीं प्रणम्यादौ सर्वकार्यर्थं सिद्धये ॥ ९ ॥ सर्वेष्वारम्भकार्येषु
त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः । देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः ।
॥ १० ॥ वक्रतुण्डमहाकाय कोटिसूर्यं समप्रभं । अविघ्नं कुरु मे देव
सर्वकार्येषु सर्वदा” ॥ ११ ॥

प्रायश्चित्त सङ्कल्पः^१

कन्यापिता स्व दक्षिण हाथमें यथाशक्ति हिरण्यादि द्रव्य-चन्दन-
पुष्प-अक्षत-दूर्वा-जल लेकर संकल्प करे ।

“हरिः ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ॐ तत्सदद्यैतस्य श्रीमद्भूगवतो
महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य, अद्यश्रीब्रह्मणो द्वितीय
पराद्द्वे, तदादौ श्री-श्वेतवाराहकल्पे, सप्तमे वैवस्वतमन्वतरे, अष्टा-
विंशतितमे कलियुगे कलि प्रथमचरणे, जम्बू द्वीपे, भरत खण्डे, तत्रापि
परमपवित्रे भारतवर्षे, आर्यावित्कंदेशांतर्गते पुण्यक्षेत्रे (कुमारिका
नामक्षेत्रे), अमुक देशे (मरु संज्ञके देशे) अमुक नगरे (पुष्कर क्षेत्रा-
न्तर्वर्ति राजस्थान प्रदेशान्तर्गत रत्नगढ नाम्नि नगरे) श्रीगङ्गा-
यमुनयोः पश्चिमे भागे, नर्मदाया उत्तरे भागे, चान्द्रसंज्ञकानां प्रभ-
वादि षष्ठिसम्वत्सराणां मध्येऽमुकनाम्नि सम्वत्सरे, श्रीमन्नृप विक्र-
मार्कसमयादमुकसंख्यापरिमिते, विक्रमाद्वे, अमुकायने, अमुकतौ,
अमुकमासे^२, अमुकपक्षे, अमुकतिथौ, अमुकवासरे, अमुकगोत्रः, अमुक
शर्माइहं (वर्मा गुप्तोऽहंवा) मम अस्या अमुकनाम्न्याः कन्याया गर्भा-
धानादि चूडान्त संस्काराणामकरणजन्यप्रत्यवायपरिहारद्वारा श्रीपर-

१ संस्कारभास्करे—“संकल्पेन विनाकर्म यत्किञ्चित्कुरुते नरः । फलं चाप्यव्यकं-
तस्य धर्मस्याद्वं क्षयो भवेत् ॥ संकीर्त्य मासपक्षादीन् निमित्तानि तर्यव च । इदं कर्मं
करिष्येऽहमिति संकल्पमाचरेत्” ॥

२ भयूषे—“मासपक्षतिथीनां च निमित्तानां च सर्वणः । उल्लेखनमकुर्वाणो न
तस्य फलभाग्यवेत् ॥” निमित्तानां संक्रमार्घोदयादीनामिति ।

मेश्वरप्रीत्यर्थं प्रतिसंस्कारं पादकुच्छु^१ चूडाया अर्द्धकुच्छुं प्रायश्चित्तं तत्प्रत्याम्नाय गोनिष्कयीभूतं यथाशक्ति इदं हिरण्यमग्निदैवतं (रजतं चन्द्रदैवतं) अमुकगोत्रायामुकशर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे”।

संकल्प करके साक्षतोदक सहित दक्षिणा ब्राह्मण को देवे और ब्राह्मण यह बोले—

“उँ स्वस्ति”^२

प्रधानसङ्कल्प

आचमन कर फिर संकल्प करे—

“मम अस्या अमुक नाम्न्याः कन्यायाः भत्रासह धर्म्यप्रजोत्पादन-गृह्यपरिग्रहधर्माचरणेष्वधिकारसिद्धिरारा श्रीपरमेश्वर प्रीत्यर्थं ब्राह्म^३ विवाहविधिना विवाहाख्यसंस्कारं करिष्ये”।

फिर हाथमें जल लेकर संकल्प करे— “तदञ्जतया विहितं निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थमादौ गणपतिपूजनं मातृकापूजनं सूर्यादिग्रहपूजनं कलशस्थापनं तत्पूजनं दिग्रक्षणं रक्षाबन्धनं स्तम्भचतुष्टयरोपणं च करिष्ये”। यहाँ वर भी अनाश्रम स्थिति प्रयुक्तदोषपरिहार के लिये प्रायश्चित्त करे ।

वर अपने दक्षिण हाथमें हिरण्यादि द्रव्य-जलाक्षत-पुष्प-हूर्वा-लेकर संकल्प करे—देशकालौ संकीर्त्य— “मम समावर्तनं दिनमारभ्य अद्यदिनं यावत् ^४अनाश्रमस्थिति-जन्यदोषपरिहारद्वारा श्रीपरमेश्वर-

१ अत्र शौनकः— “एतेष्वैकैकलोपे तु पादकुच्छुं समाचरेत् । चूडाया अर्द्धकुच्छुं स्यादापदीत्येवमीरितम् । अनापदि तु सर्वंत्र द्विगुणं द्विगुणं चरेत्”।

२ आदित्य पुराणे — “ओंकारमुच्चरन् प्राज्ञो द्रविणं शक्तुमोदनम् । गृह्णीया-दक्षिणे हस्ते तदन्ते स्वस्ति कीर्तयेत् ॥”

३ शब्द कल्पद्रुमे — “ब्राह्मो दैवस्तथा चार्षः प्राजापत्यस्तथासुरः । गान्धर्वोराक्षस-इवं व पैशाचश्चाष्टमोऽधमः” ॥

“प्रसाद्य चार्चयित्वा च श्रुतिशीलवते स्वयम् । दद्यात् कन्यां यथान्यायं ब्राह्मो धर्मः प्रकीर्तितः” ।

४ दक्षस्मृतौ — “अनाश्रमी न तिष्ठेत् दिनमेकमपि द्विजः । आश्रमेण विना तिष्ठन् प्रायश्चित्ति भवेद्दि सः” ॥

प्रीत्यर्थं १प्राजापत्यकुच्छुप्रत्याम्नायभूतैकगानिष्ठयीभूतमिदं हिरण्य-
मरिनदैवतं (रजतं चन्द्रदैवतं वा) अमुकगोत्रायामुकशर्मणे ब्राह्मणाय
तुभ्यमहं सम्प्रददे”। संकल्प करके दक्षिणा ब्राह्मण के हाथ में देवे
और ब्राह्मण यह बोले—“ॐ स्वस्ति”।

पहले कर्मार्थं २गंगाजल पूरित कलश की पूजा करे। यजमान हाथ
में चावल लेकर वरुण का आवाहन करे—“ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा व्वन्द-
मानस्तदा शास्ते यजमानो हर्विभिः। अहेऽमानो व्वरुणेह बोध्युरुश ठं०
समानऽआयुः प्रमोषीः”। अस्मिन्कलशे भगवन् वरुण इहागच्छ इह
तिष्ठ ॥ १ ॥

“ॐ अपास्पति वरुणाय नमः”। इस नाम मन्त्र से पाद्मादि षोड-
शोपचार पूजन कर प्रार्थना करे।

“ॐ पाशपाणे ! नमस्तुभ्यं पद्मनीजीवनायक ! यावत्कर्मा-
वशानं स्यात्तावत्त्वं सन्निधौ भव” ॥ १ ॥ अनया पूजया अपास्पति
वरुणः साङ्घः सपरिवारः प्रीयताम् ।

यजमान दूर्वाकी प्रोक्षणीसे कलशोदकसे पूजासामग्री और अपनी
आत्मा का प्रोक्षण^३ करे—

“ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थाङ्गतोऽपि वा । यः स्मरेत्पु-
ण्डरीकाक्षं स बाह्याऽभ्यन्तरः शुचिः” ॥ १ ॥ “ॐ पुण्डरीकाक्षः
पुनातु ३” ।

१ संस्कारदीपके—“प्राजापत्येष्वशक्तस्तु धेनुं दद्यात्परस्वनीम् । धेनोरभावे-
निष्कं वा तद्धंपादमेव वा ॥ सुवर्णं रजतं वाऽपि दद्याच्छक्त्यानुसारतः ।” अष्टीति गुञ्जा-
त्वकः कर्षश्चत्वारः कर्षा तिष्कः ।

विं पारिजाते—“निष्कं सुवर्णाश्चत्वारः कार्षिकस्तान्निकः पणः” ॥

अन्यच्च—“दशाद्वंगुञ्जं प्रवदन्ति माषं माषाह्यै षोडशभिश्च कर्षम् । कर्षश्चतु-
भिश्च पलं तुलाज्ञाः कर्षं सुवर्णस्य सुवर्णसंज्ञम्” ॥

२ आचार भूषणे—“सर्वं त्र पावनी गंगा त्रिषु स्थानेषु दुष्यति । म्लेच्छस्यर्णं
सुराभाष्टे कूपादिजलमिश्रणे” ॥

कर्मप्रदीपे—“सुवासितजलैः पूर्णं वामे कुम्भं सुपूजयेत् । कलशस्येति मन्त्रेण तीर्था-
न्यावहयेत्ततः” ॥

३ आद्विवेके—“नाऽप्रोक्षितं स्पृशेत्किञ्चिदैवे पिश्ये च कर्मणि” ।

दीपपूजनम्

“ॐ दीपाय नमः” । इस मंत्रसे यजमान दीपक को पूजाकर प्रार्थना करे—“भो दीप ! ब्रह्मरूपस्त्वमन्धकार निवारकः । इमां मया कृतां पूजां गृहणस्तेजः प्रवर्धय” ॥ १ ॥

अनया पूजया ज्योतीरूपः प्रत्यक्षदीपः प्रीयताम् ।

गणयागः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि गणयागं सुखावहम् । कामके वासवेयज्ञे विवाहे व्रतसंयमे ॥ १ ॥ आदौ गणेश्वरं पूज्य^१ सर्वकामफलप्रदम् । मासमासाधिपं देवं गाणपत्यं लभेन्नरः ॥ २ ॥ येनासौ पूजितो यज्ञे मासाचार्यः प्रपूजितः । कोऽसौ मासपतिदेवो ह्यत्र धूपेन धूपितः ॥ ३ ॥ ज्येष्ठमासं कृतं पूज्य यज्ञकाले सनातनम् । मण्डलं प्रथमं पूज्यं कोष्ठं द्वादशमुत्तमम् ॥ ४ ॥ सिन्दूरेणाच्चितो देव ईशाने तु विनायकः । ग्रहयुक्तं ततः स्थाप्य मासे मासेऽधिकं फलम् ॥ ५ ॥ गणाधिपं मार्गशीर्षं तथा पौषे विनायकम् । गजवक्त्रं तु माघे च भालचन्द्रं च फाल्युने ॥ ६ ॥ चैत्रमासे तु वेदाङ्गं वैशाखे शिवसूनुकम् । ज्येष्ठे शिवसुतं पूज्य आषाढे हरनन्दनम् ॥ ७ ॥ श्रावणे तापसं देवं भाद्रे च मोदकप्रियम् । आश्विने च महावीर्यं महावीर्यं च कार्तिके ॥ ८ ॥ विघ्नहर्तारमधिके मासि पूज्य गणेश्वरम् । गन्धपुष्पैस्तथा धूपैः कर्पूरैयक्षकर्दमैः ॥ ९ ॥ मृगमदैः कुङ्कुमैश्च सिन्दूरेण विशेषतः । रक्तोत्पलदलैः पूज्य बिल्वपत्रेण केशरैः ॥ १० ॥ मालतीकेतकीपुष्पैर्हेमपुष्पैर्विक्षणैः । अर्ध्यं धूपं च दीपं च रक्तवस्त्रेण छादनम् ॥ ११ ॥ पूजायां कुरुते देवे दद्यान्मोदक भोजनम् । नमो देव गणेशाय नमस्ते विघ्ननाशन ॥ १२ ॥ नमस्ते मूषिकारूढ शुभाकाराय वै नमः । नमः कात्यानी पुत्र लम्बकर्णयि वै नमः ॥ १३ ॥ गजदन्त विरूपात्मन् विद्याबुद्धि विचक्षण । देहि मे पुत्र सौभाग्यं देहि मे सुखसम्पदः ॥ १४ ॥

१ आर्षत्वात्समासाभावेऽपि त्यप्त प्रत्ययो वोष्यः ।

वाच्छितार्थप्रदं देवं वरदं विघ्ननायकम् । शत्रुदुष्टाश्च ये केचिद् दुर्जना-
श्चैव येऽखिलाः ॥ १५ ॥ तेषां दण्डहितार्थाय प्रार्थये त्वां गणेश्वरम् ।
आदौ पूजा गणेशस्य शान्तिश्चैव विशेषतः ॥ १६ ॥ नाशयेत्सर्वं-
विघ्नानि कल्याणञ्च भवेत्सदा । कृष्णेन भाषितं पूर्वं देवताः परि-
कीर्तिता ॥ १७ ॥ मण्डलं यत्र यज्ञे च भोक्ता तत्र विनायकः । गणयाग
विहीनस्य निष्फलं तस्य जायते ॥ १८ ॥ हरते सर्वं विघ्नानि त्वत्प्रसादो
विनायकः । आयुः कर्त्ता शान्ति कर्त्ता वरदो भव पूजितः ॥ १९ ॥”
इति गणयागः ।

गणपतिपूजनम्^१

यजमान और वर हाथ में अक्षत पुष्ट लेकर आवाहन करे—
“ॐ श्वेताङ्गं श्वेतवस्त्रं सितकुसुमगणैः पूजितं श्वेतगन्धैः क्षीराब्धौ
रत्नदीपैः सुरतरुविमले रत्नसिंहासनस्थम् । दोभिःपाशांकुशेष्टाभय-
धृतिविशदं चन्द्रमौलि त्रिनेत्रं ध्यायेच्छान्त्यर्थमीशं गणपतिममलं श्रीस-
मेतं प्रसन्नम् ॥ १ ॥ ॐ गणानान्त्वा गणपति ठं० हवामहे प्रियाणान्त्वा
प्रियपति ठं० हवामहे । निधिनान्त्वा निधिपति ठं० हवामहे व्वसो
मम । आहमजानिगर्बधमात्वमजासि गर्बधम्” ॥ २ ॥ ॐ भूर्भुवः
स्वः सिद्धिबुद्धिसहित महागणाधिपतये नमः, गणपतिमावाहयामि
स्थापयामि ।

“ॐ गणपतये नमः” । इस नाम मन्त्रसे पाद्यादि षोडशोपचार
पूजनकर प्रार्थना करे ।

प्रार्थना

“ॐ गजाननम्भूतगणादि सेवितं कपित्थजम्बुफलचारुभक्षणम् ।
उमासुतं शोकविनाशकारकं नमामि विघ्नेश्वरपादपंकजम्” ॥ १ ॥
अनथा पूजया श्रीगणपतिः साङ्गः सपरिवारः प्रीयताम् ।

१ सं० भास्करे — “आदौ विनायकः पूज्यश्चान्ते तु कुलदेवता” ।

भविष्यपुराणे च — “देवतादौ यदा मोहाद्गणेशो न च पूज्यते । तदा पूजाफलं
हन्ति विघ्नराजो गणधिपः” ॥

स्वस्तिपुण्याह वाचनम्

“ॐ स्वस्ति नऽइन्द्रो वृद्धश्वाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्ववेदाः ।
 स्वस्ति नस्ताक्षर्योऽअरिष्ट नेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्द्वंधातु ॥ १ ॥
 ॐ पयः पृथिव्याम्पयऽओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः । पयस्वतीः
 प्रदिशः सन्तु मह्यम् ॥ २ ॥ ॐ विष्णो रराटमसि विष्णोः इनप्त्रे
 स्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोऽसि । वैष्णवमसि व्विष्णवे त्वा
 ॥ ३ ॥ ॐ अग्निर्देवता व्वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता ।
 वसवो देवता रुद्रा देवता दित्या देवता मरुतो देवता विश्वेदेवा देवता
 बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता व्वरुणो देवता ॥ ४ ॥ ॐ द्यौः शान्तिरन्त-
 रिक्ष ठं० शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । व्वन-
 स्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं ठं० शान्तिः शान्ति
 रेव शान्तिः सामाशान्तिरेधि ॥ ५ ॥ ॐ व्विश्वानि देव सवितद्दुर्लित-
 तानि परासुव । यद्गद्गन्तन्नऽआसुव ॥ ६ ॥ ॐ एतन्ते देव सवित-
 र्यज्ञमप्त्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे । तेन यज्ञमवतेनयज्ञपतिन्तेन मासव ॥ ७ ॥

इति स्वस्तिवाचनं पठित्वा पुण्याहवाचनकलशस्थवरुणं गन्धा-
 दिभिः सम्पूज्य ब्राह्मणानां हस्ते सुप्रोक्षणादिकं कुर्यात् ।

तद्यथा—“ॐ शिवा आपः सन्तु” इति जलम् । (सन्तु शिवाः
 आपः) इति प्रति वचनम् ।

“सौमनस्यमस्तु” इति पुण्याणि । “अस्तु सौमनस्यम्” इति प्रति
 वचनम् । (एवं सर्वत्र प्रतिवचनंदद्युः) “अक्षतं चारिष्टं चास्तु”
 अस्त्वक्षतमरिष्टं च । “गन्धाः पान्तु” । सौमज्जल्यं^१ चास्तु । “अक्षताः
 पान्तु” । आयुष्यमस्तु । “पुण्याणि पान्तु” । सौश्रियमस्तु । “सफलता-
 म्बूलानि पान्तु” । ऐश्वर्यमस्तु । “दक्षिणाः पान्तु” बहुधनमस्तु । “पुनर-
 त्रापः पान्तु” । स्वर्चितमस्तु ।

“ॐ पुण्याहकालं वाचयिष्ये” इति यजमानः । वाच्यतामिति
 विप्राः ।

^१ सौमज्जल्यमिति । भावेष्यत्र । सुमज्जल्यमिति पाठस्तु सुमज्जलाय हितमिति हिते-
 ऽर्ये यत्प्रत्ययेन साधनीयः ।

ततः “ब्राह्मं पुण्यमहर्यच्च सूष्टुचुत्पादनकारकम् । वेदवृक्षो-
द्भूवं नित्यं तत्पुण्याहं ब्रुवन्तु नः” ॥ १ ॥ भो ब्राह्मणाः मम कन्याया
क्रियमाणस्य विवाहाख्यसंस्कारकर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु ।
“ॐ पुण्याहं ३” इति त्रिविप्रा ब्रूयुः ।

“ॐ पुनन्तुमादेवजनाः पुनन्तु मनसाधियः । पुनन्तुविश्वाभूतानि
जातवेदः पुनीहिमा” ॥ १ ॥

“पृथिव्यामुदधृतायां तु थत्कल्याणं पुराकृतम् । ऋषिभिः सिद्धगन्ध-
वेंस्तत्कल्याणं ब्रुवन्तु नः” ॥ २ ॥ भो ब्राह्मणाः मम कन्यायाः क्रियमा-
णस्य विवाहाख्यसंस्कारकर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु । “ॐ कल्या-
णम् ३” इति त्रिविप्रा ब्रूयुः ।

“ॐ यथेमां व्वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः । ब्रह्मराजन्याभ्या
शूश्राद्यचार्यायिचस्वायचारणाय च । प्रियोदेवानां दक्षिणायैदातुरिह
भूयासमयं मे कामः समृद्ध्यतामुपमादोनमतु” ॥ २ ॥

“सागरस्य तु या ऋद्धिर्महालक्ष्यादिभिः कृता । सम्पूर्णा सुप्रभावा
च तां च ऋद्धिं ब्रुवन्तु नः” ॥ ३ ॥ भो ब्राह्मणाः मम कन्यायाः क्रिय-
माणस्य विवाहाख्यसंस्कारकर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु । “ॐ ऋद्धुच-
ताम् ३” इति त्रिविप्रा ब्रूयुः । “ॐ सत्रस्यऋद्धिरस्यगन्मज्योतिर-
मृताऽभूम । दिवं पृथिव्याऽअध्यारुहामाविदामदेवान्तस्वज्योतिः”
॥ ३ ॥

“स्वस्तिस्तु याऽविनाशाख्या पुण्यकल्याणवृद्धिदा । विनायकप्रिया
नित्यं तां च स्वस्तिं ब्रुवन्तु नः” ॥ ४ ॥ भो ब्राह्मणाः मम कन्यायाः
क्रियमाणस्य विवाहाख्यसंस्कारकर्मणः स्वस्तिं भवन्तो ब्रुवन्तु । “ॐ
आयुष्मते स्वस्ति ३” इति त्रिविप्रा ब्रूयुः । “ॐ स्वस्तिनऽइन्द्रोवृद्ध-
श्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः स्वस्तिनस्ताक्षर्योऽअरिष्टनेमिः
स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु” ॥ ४ ॥

“समुद्रमथनाज्जाता जगदानन्दकारिका । हरिप्रिया च माङ्गल्या
तां श्रियं च ब्रुवन्तु नः” ॥ ५ ॥ भो ब्राह्मणाः मम कन्यायाः क्रियमाणस्य
विवाहाख्यसंस्कारकर्मणः श्रीरस्त्वति भवन्तो ब्रुवन्तु । “ॐ अस्तु

श्रीः ३” इति त्रिविष्णा ब्रयुः । “ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रेपाश्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणा मुम्मङ्गिषाण सर्वं लोकम्भिष्ठाण” ॥ ५ ॥

ततो यजमानः—“अस्मिन्पुण्याहवाचने न्यूनातिरिक्तो यो विधिः स उपविष्टब्राह्मणानां वचनात् श्रीमहागणपतिप्रसादाच्च सर्वः परिपूर्णोऽस्तु” । इति ब्रूयात् । “अस्तु परिपूर्णः” इति द्विजाः ।

ततो यजमानो देशकालौ संकीर्त्य-

“कृतैतत्पुण्याहवाचनकर्मणः साञ्ज्ञतासिद्ध्यर्थं तत्संपूर्णफलप्राप्त्यर्थं च पुण्याहवाचकेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो विभज्य मनसोद्दिष्टां दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये” । इति संकल्प करके ब्राह्मणोंको देवे ॥ अनेन पुण्याहवाचनेन श्रीप्रजापतिः प्रीयताम् ।

इति पुण्याहवाचनम् ।

मातृकापूजनम्^१

यजमान और वर अपने बांये हाथमें चावल लेकर दाहिने हाथसे नीचे लिखे प्रत्येक नामसे छोड़ता जाये—“ॐ गणेशायनमः” गणेशमावहयामि १ “ॐ गौर्येनमः” गौरीमावाहयामि २ “ॐ पद्मायै नमः” पद्मामावाहयामि ३ “ॐ शच्यै नमः” शचीमावाहयामि ४ “ॐ मेधायै नमः” मेधामावाहयामि ५ “ॐ सावित्र्यै नमः” सावित्रीमावाहयामि ६ “ॐ विजयायै नमः” विजयामावाहयामि ७ “ॐ जयायै नमः” जयामावाहयामि ८ “ॐ देवसेनायै नमः” देवसेनामावाहयामि ९ “ॐ स्वधायै नमः” स्वधामावाहयामि १० “ॐ स्वाहायै नमः” स्वाहामावाहयामि ११ “ॐ मातृभ्यो नमः” मातृरावाहयामि १२ “ॐ लोकमातृभ्यो नमः” लोकमातृरावाहयामि १३ “ॐ हृष्टचै नमः” हृष्टिमावाहयामि १४ “ॐ पुष्टचै नमः” पुष्टिमावाहयामि १५ “ॐ तुष्टचै

१ कथायनः—“कर्मादिषु च सर्वेषु मातरः सगणाधिपाः । पूजनीयाः प्रयत्नेन पूजिता: पूजयन्ति ताः॥”

संग्रहे—“विना मातृक्या यागं ग्रहाचार्यो समारम्भेत् । कुर्यान्ति मातरः सर्वा द्युशुभं विन्दते फलम् ॥”

नमः” तुष्टिमावाहयामि १६ “ॐ आत्मनः कुलदेवतायै नमः” आत्मनः कुलदेवतामावाहयामि १७ “ॐ मनोजूर्तिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनो त्वरिष्ट यज्ञ ठं० समिमं दधातु। विश्वे देवासऽइह मा दयन्ता मो इम्प्रतिष्ठ” ॥ १८ ॥ इत्यावाह्य—“ॐ गौर्यादिषोडशमातृभ्यो नमः” ।

पाद्यादि षोडशोपचार पूजन कर प्रार्थना करे— “ॐ जयन्ती मङ्गलाकाली भद्रकाली कपालिनी । दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तुते” ॥ १ ॥ अनया पूजया गौर्यादिषोडशमातरः प्रीयन्ताम् ।

सूर्यादिग्रहपूजनम्^१

यजमान और वर अपने बांये हाथमें चावल लेकर दाहिने हाथसे प्रत्येक मन्त्रसे नवग्रहों पर अक्षत छोड़े—“ॐ आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतम्भर्त्यञ्च । हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्” ॥ १ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः सूर्य इहागच्छ इह तिष्ठ सूर्याय नमः । “ॐ इमं देवाऽअसपत्न ठं० सुवद्धम्भहते क्षत्राय महते ज्यैष्ठचाय महते ज्जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय । इमममुष्य पुत्रममुष्ये पुत्रमस्यै विशऽएषवो मीराजा सोमोऽस्माकम्ब्राह्मणाना ७५ राजा” ॥ २ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वश्चन्द्र इहागच्छ इह तिष्ठ । चन्द्राय नमः । “ॐ अग्निर्मूर्ढ्वा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम् । अपा ७५ रेता ७५ सिजिन्वति” ॥ ३ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वभौम इहागच्छ इह तिष्ठ । भौमाय नमः ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहित्वमिष्टापूर्ते स ठं० सृजेथामयञ्च । अस्मिन्तसधस्येऽध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत” ॥ ४ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः बुध इहागच्छ इह तिष्ठ । बुधाय नमः । “ॐ बृहस्पतेऽअतियदर्थ्योऽर्हा द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु । यदीदयच्छवसऽऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्” ॥ ५ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः बृहस्पते इहा गच्छ इह तिष्ठ । बृहस्पतये नमः । “ॐ अन्नात्परिसुतोरसं ब्रह्मणा व्यपिबत्क्षत्रम्पयः सोमम्प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमि-

^१ उत्पलपरिमले — “कार्यारम्भेषु सर्वेषु प्रतिष्ठास्वध्वरेषु च । नववेशप्रवेशे च गर्भाधानादि कर्मसु । आरोग्यस्नानसमये संक्रान्ती रोगसंभवे ॥ अभिचारे च यः कुर्याद् ग्रहपूजां विधानतः । सोऽभीष्टफलमाप्नोति निर्विघ्नेन न संशयः” ॥

निद्रयं व्विपान ठं० शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयोऽमृतम्मधुं” ॥ ६ ॥
 ॐ भूर्भुवः स्वः शुक्र इहागच्छ इह तिष्ठ । शुक्राय नमः । “ॐ शन्मो
 देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये । शँयोरभिस्तवन्तु नः” ॥ ७ ॥
 ॐ भूर्भुवः स्वः शनैश्चर इहागच्छ इह तिष्ठ । शनैश्चराय नमः । “ॐ
 क्या नश्चित्रऽआभुवदूती सदावृथः सखा । क्या शच्चिष्ठया वृता”
 ॥ ८ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः राहो इहागच्छ इह तिष्ठ । राहवे नमः ।
 “ॐ केतुं कृणवन्न केतवे पेशो मर्यादिअपेशसे । समुषद्विरजा यथा”
 ॥ ९ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः केतो इहागच्छ इह तिष्ठ । केतवे नमः । “ॐ
 मनो जूति रुषतामाज्यस्य वृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनो त्वरिष्टं यज्ञ ठं०
 समिमं दधातु । विश्वेदेवा सऽइहं मा दयन्ता मो म्प्रतिष्ठ” ॥ १० ॥

इत्यावाह्य-

“ॐ सूर्यादि ग्रहेभ्यो नमः” । पाद्यादि षोडशोपचार पूजन कर
 प्रार्थना करे ।

“ॐ ब्रह्मामुरास्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमिसुतो वृधश्च ।
 गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः सर्वे ग्रहाः शान्तिकरा भवन्तु” ॥ १ ॥
 अनया पूजया सूर्यादिग्रहाः प्रीयंताम् ।

कलशस्थापन प्रयोगः

कलश स्थापन के स्थानमें पूजनके पहिले ईशान कोणमें चावलादि
 से अष्टदल बनाकर उस पर अव्रण कलश स्थापित करना चाहिये ।
 यजमान और वर पृथ्वीको सीधे हाथसे स्पर्श करे— “ॐ मही द्यौः
 पृथिवी च न इमं यज्ञमिमिक्षताम् । पिपृतान्नो भरीमभिः” ॥ १ ॥

कुछ धान्य कलश के नीचे छोड़े

“ॐ धान्यमसि धिनुहि देवान् प्राणायत्वो दानायत्वा व्यानायत्वा
 दीर्घमिनु प्रसितिमायुषेद्धां देवो वः सविता हिरण्यपाणिः । प्रति
 गृभणात्वच्छ्रेणपाणिना चक्षुषे त्वा महीनाम्पयोसि” ॥ २ ॥

धान्यपर कलश रखे

“ॐ आजिघ्र कलशं मह्यात्वा विशन्त्वन्दवः पुनरूर्ज्जी निवर्तस्व
 सा नः सहस्रं धृक्ष्वोरुधारा पयस्वती पुनर्मर्मा विशताद्रयिः” ॥ ३ ॥

जल कलशमें छोड़े

“ॐ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्य स्कम्भसज्जनीस्थो व्वरुणस्य
ऋहृत सदन्न्यसि । व्वरुणस्यऋहृतसदनमसि व्वरुणस्य—ऋहृतसदन-
मासीद” ॥ ४ ॥

गन्ध कलशमें छोड़े

“ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षा नित्यपुष्टां करिषिणीम् । ईश्वरीं सर्व-
भूतानां तामिहोपह्रये श्रियम्” ॥ ५ ॥

सर्वाषधी कलशमें छोड़े

“ॐ याऽओषधीः पूर्वजाता देवेभ्य स्त्रियुगम्पुरा । मनैनु बञ्चूणा-
मह ठं० शतं धामानि सप्त च” ॥ ६ ॥

द्वूर्वा कलशमें छोड़े

“ॐ काण्डात्काण्डात्प्रोहन्ती परुषः परुषस्परि । एवानो द्वूर्वे
प्रतनु सहस्रेण शतेन च” ॥ ७ ॥

पञ्चपल्लव^१ (आम, वट, पीपल, गूलर और पलाश)

कलशमें छोड़े

“ॐ अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो व्वसतिष्कृता । गोभाजऽइत्कि-
लासथ यत्सनवथ पूरुषम्” ॥ ८ ॥ सप्तमृत्तिका^२ (अश्व, गज, नदी,
बांबी, राजद्वार, गोशाला और चौरास्तेकी) कलशमें छोड़े—

“ॐ स्योना पृथिवीनो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छानः शर्म्म
सप्रथाः” ॥ ९ ॥

पूरीफल (सुपारी) कलशमें छोड़े—

“ॐ याः फलनीर्याऽ अफलाऽ अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः । बृहस्पति
प्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्व ठं० हसः” ॥ १० ॥

^१ पिम्पलस्य तथाऽभ्रस्य प्लक्षस्योदुम्बरस्य च । वटस्य पल्लवा ज्ञेया पञ्च-
पल्लव नामतः” ॥

नाह्ये — “अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षचूतन्यग्रोधपल्लवाः । पञ्चभञ्जा इति प्रोक्ता
सर्वकर्मसु शोभना” ॥

^२ “अश्वस्थानाद् गजस्थानात् राजद्वाराच्चतुष्पथात् । तडागाद् गोष्ठवल्मीकाद्
हृताः सप्तमृदः स्मृताः” ॥

पञ्चरत्नानि^१— (सोना, हीरा, नीलमणि, माणक, सोती)
कलशमें छोड़े—

“ॐ परिवाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् । दधद्रत्नानि दाशुषे”

॥ ११ ॥

स्वर्ण अथवा द्रव्य कलशमें छोड़े—

“ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत् ।
सदाधार पृथिवीन्द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा व्विधेम्” ॥ १२ ॥

वस्त्र या शोली कलशपर लपेटे—

“ॐ युवासुवासाः परिवीतऽआगात्सऽउश्रेयान् भवति जाय-
मानः । तं धीरा सः कवयऽउन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः” ॥ १३ ॥

दूर्वाकी पवित्री बनाकर कलशमें छोड़े—

“ॐ पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसवऽउत्पुनाम्यच्छद्रेण पवि-
त्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः । तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने
तच्छकेयम्” ॥ १४ ॥

पूर्णपात्र (चावलों से भरा पात्र) कलश पर रखे—

“ॐ पूर्णदर्वि परापत सुपूर्णा पुनरापत । वस्नेव विक्रीणा वहाऽ-
इषमूर्ज्ज नं० शतक्रतो” ॥ १५ ॥

श्रीफल (लालबस्त्र लपेटकर नारियल) कलशपर रखे—

“ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्याव्वहोरात्रे पाश्वे नक्षत्राणि रूपम-
शिवनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणा मुम्मऽइषाण सर्वलोकम्मऽइषाण”

॥ १६ ॥

कलशमें वरुणका आवाहन करे—

प्रजमान और वर हाथमें चावल लेकर “ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा
व्वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो व्वरुणे हबोध्यु-

१ का० पुराणे — “कनकं कुलिशं नीलं पद्मरागं च मौकितिकम् । एतानि पञ्च-
रत्नानि रत्नशास्त्रविदो विदुः । अभावे सर्वरत्नानांहेम सर्वत्र योजयेत् ।”

विष्णुधर्मोत्तरे— “वज्रमणिक्यवै डूर्यं पुष्परागेन्द्रनीलकम् । पञ्चरत्नमिति स्यात्
नारदेन महर्षिणा” ॥

रुश ठं० समानऽआयुः प्रमोषीः” ॥ १ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः वरुण इहा-
गच्छ इह तिष्ठ ।

“ॐ वरुणाय नमः” पाद्यादि बोडशोपचार पूजन कर तीर्थोंका
आवाहन करे ।

“ॐ सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः । आयान्तु यज-
मानस्य (मम शान्त्यर्थ) दुरितक्षयकारकाः” ॥ १ ॥ दक्षिण हाथकी
अनामिका^१से कलशाभिमन्त्रण करे ।

कलशाभिमन्त्रणम्

“ॐ कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः । मूले तस्य
स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ॥ १ ॥ कुक्षौ तु सागराः सप्त
सप्तद्वीपा वसुन्धरा । ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यर्थर्वणः ॥ २ ॥
अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशन्तु समाश्रिताः । अत्र गायत्री सावित्री शान्तिः
पुष्टिकरी तथा । आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः” ॥ ३ ॥

प्रार्थना

“ॐ देवदानवसंवादे मथ्यमाने महोदधौ । उत्पन्नोऽसि यदा कुम्भ!
विधृतो विष्णुना स्वयम् ॥ १ ॥ त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि
स्थिताः । त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ॥ २ ॥
शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः । आदित्या वसवो रुद्रा
विश्वेदेवाः सपैतृकाः ॥ ३ ॥ त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफल-
प्रदाः । त्वत्प्रसादादिमं यज्ञ कर्तुमीहे जलोऽद्भूव ! ॥ ४ ॥ अनया पूजया अपाम्पतिवरुणः
साङ्गः सपरिवारः प्रीयताम् ।

रक्षाविधानम्

यजमान और वर अपने बायें हाथमें पीली सरसों, चावल, द्रव्य

१ देवयाज्ञिकः—“स्पृशन्त्वनामिकाग्रेण क्वचिदालोकयन्नपि । अनुमन्त्रणं सर्वं त्र
सदैवमनुमन्त्रयेत्” ॥

और तीन तारकी मोली लेकर दाहिने हाथ से ढँककर नीचे लिखे मन्त्र बोले—

“ॐ गणाधिपं नमस्कृत्य नमस्कृत्य पितामहम् । विष्णुं रुद्रं श्रियं देवीं वन्दे भवत्या सरस्वतीम् ॥ १ ॥ स्थानाधिपं नमस्कृत्य दिन-नाथं निशाकरम् । धरणीगर्भसंभूतं शशिपुत्रं वृहस्पतिम् ॥ २ ॥ दैत्या-चार्यं नमस्कृत्य सूर्यपुत्रं महाग्रहम् । राहुं केतुं नमस्कृत्य यज्ञारम्भे विशेषतः ॥ ३ ॥ शक्राद्या देवताः सर्वा नमस्कृत्य मुनींस्तथा । गर्गं मुनिं नमस्कृत्य नारदं मुनिसत्तमम् ॥ ४ ॥ वशिष्ठं मुनिशार्दूलं विश्वा-मित्रं महामुनिम् । व्यासं मुनिं नमस्कृत्य सर्वशास्त्रविशारदम् ॥ ५ ॥ विद्याधिका ये मुनय आचार्याश्च तपोधनाः । सर्वे ते मम यज्ञस्य रक्षां कुर्वन्तु विघ्नतः” ॥ ६ ॥

बांये हाथमें से पीली सरसों तथा चावल लेकर नीचे लिखे मन्त्र बोलता हुआ दाहिने हाथसे सब दिशाओंमें छोड़े ।

“ॐ प्राच्यां रक्षतु गोविन्द आग्नेयां गरुडध्वजः । याम्यां रक्षतु वारांहो नारसिंहस्तु नैऋते ॥ ७ ॥ वारुण्यां केशवो रक्षेद्वायव्यां मधु-सूदनः । उत्तरे श्रीधरो रक्षेदैशान्यां तु गदाधरः ॥ ८ ॥ ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेदधस्ताच्च त्रिविक्रमः । एवं दिक्षु च मां रक्षेद्वासुदेवो जनार्दनः ॥ ९ ॥ शंखो रक्षेच्च यज्ञाग्रे पृष्ठे खञ्जस्तथैव च । वामपाश्वे गदा रक्षेदक्षिणे तु सुदर्शनः ॥ १० ॥ उपेन्द्रः पातु ब्रह्माणमाचार्यं पातु वामनः । अच्युतः पातु ऋग्वेदं यजुर्वेदमधोक्षजः ॥ ११ ॥ कृष्णो रक्षतु सामानि ह्यथर्वं माधवस्तथा । उपविष्टाश्च ये विप्रास्तेऽनिरुद्धेन रक्षिताः ॥ १२ ॥ यजमानं सपत्नीकं कमलाक्षश्च रक्षतु । रक्षाहीनं तु यत्स्थानं तत्सर्वं रक्षताद्वरिः ॥ १३ ॥ यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमा-श्रित्य सर्वदा । स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु ॥ १४ ॥ अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम् । सर्वेषामविरोधेन ब्रह्मकर्म (विवाहकर्म) समारभे” ॥ १५ ॥ पश्चात् मोली गणेशजीके सामने रख देवे । फिर उस मोलीमें से गणपत्यादि समस्त देवताओंको चढ़ा-

कर ब्राह्मणोंके रक्षा बन्धन^१ करे । तत्रमन्त्रः—“ॐ व्रतेन दीक्षामा-
प्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् । दक्षिणाश्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्य-
माप्यते” ॥ १ ॥

यजमान और वर ब्राह्मणोंके तिलक करे—

तत्रमन्त्रः—“ॐ युञ्जन्ति व्रध्नमरुषं चरन्तं परितस्थुषः रोचन्ते
रोचनादिवि । युञ्जन्त्यस्य काम्या हरी विपक्षसारथे शोणा धृष्णू
नृवाहसा” ॥ १ ॥

यजमान और वरके राखी बांधे—

तत्रमन्त्राः—“ॐ यदावधनं दाक्षायणा हिरण्य ठ० शतानीकाय
सुमनस्यमानाः । तन्मऽआवध्नामि शत शारदायायुष्माञ्जरदण्टिर्यथा-
सम्” ॥ १ ॥ “येन राजा वलिर्बद्धो दानवेन्द्रो महावलः । तेनत्वामनु-
बध्नामि रक्षे माचल माचल । ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च रक्षां कुर्वन्तु ते
सदा” ॥ २ ॥

यजमान और वरके तिलक करे—

तत्रमन्त्रः—“ॐ स्वस्ति नऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्व-
वेदाः । स्वस्ति नस्ताक्षर्योऽरिष्टनेमिः स्वस्ति नो वृहस्पतिर्दधातु ॥ १ ॥

यजमान और वर अपने-अपने हाथमें जल अक्षत लेकर संकल्प
करे— “कृतैतद्रक्षाबन्धनकर्मणः सादगुण्यार्थं ब्राह्मणेभ्यो मनसोविष्टां
दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये” । इति रक्षाविधानम् ।

विवाह विधानम्

कन्यापिता ऊर्ध्वजानु पूर्वाभिमुख बैठे हुए वरको सम्बोधन कर
यह कहे— (ॐ साधु भवानास्तामिति प्रजापतिर्त्रिष्ट्रिब्रह्मा देवता
यजुश्छन्दो वराचर्ने विनियोगः)

“ॐ साधु भवानास्तामर्चयिष्यामो भवन्तम्” ।

१ सं० दीपके—“पादाङ्गुष्ठं सभारभ्य केशान्तं च नरषंभ । रक्षासूत्रं प्रकर्तव्य
सर्वत्र शुभकर्मणि” ॥

२ दैवादिकत्वात् श्यनि— उत्सृज्ये इति स्यात् न तु “उत्सृजे” इति संकल्पान्ते
विद्वद्विविचारणीयम् ॥

वर कहे— “ॐ अर्चय” ।

पुरोहित— “ॐ विष्टरो विष्टरो विष्टरः” ।

यजमान एक विष्टर^१ लेकर कहे “ॐ विष्टर प्रतिगृह्यताम्” ।

वर कहे— “ॐ विष्टरं प्रतिगृह्णामि” ।

वर दाता के पास से दोनों हाथोंसे चुपचाप विष्टर लेकर उत्तरा-ग्रकर आसनके नीचे रख ऊपर बैठता हुआ यह मन्त्र बोले ।

(ॐ वष्ट्मोऽस्मीत्यर्थवर्णं कृषिरनुष्टुप्छन्दो विष्टरो देवता उप-वेशने विनियोगः) “ॐ वष्ट्मोऽस्मि समानानामुद्यतामिव सूर्यः । इमं तमभि तिष्ठामि यो मा कश्चाभिदासति” ॥

पुरोहित कहे— “ॐ पाद्यं पाद्यं पाद्यम्” ।

यजमान कहे— “ॐ पाद्यं प्रतिगृह्यताम्” ।

वर कहे— “ॐ पाद्यं प्रतिगृह्णामि” ।

वर यजमानाऽज्जलिसे पाद्यपात्र अहणकर भूमिपर रख अञ्जलिसे पात्रके जलसे ब्राह्मण स्वयं^२ दक्षिणपाद^३ धोवे फिर वाम पाद धोवे । क्षत्रिय, वैश्य तो पहले वामपाद फिर दक्षिणपाद धोवे । वर मन्त्र पढ़े (ॐ विराजो दोहोऽसीति प्रजापतिर्क्षिर्यजुश्छन्द आपो देवता पाद-प्रक्षालने विनियोगः) “ॐ व्विराजो दोहोऽसि व्विराजो दोहमशीय मयि पाद्यायै व्विराजो दोहः” ॥

यजमान दूसरा विष्टर लेकर—“ॐ विष्टरो विष्टरो विष्टरः” । इत्यन्येनोक्ते ।

यजमान—“ॐ विष्टरः प्रतिगृह्यताम्” ।

१ वेणी की तरह गूंथकर पञ्चीस कुशाओं का विष्टर बनावे— “पञ्चविंशति दर्भाणां वेण्यग्रेग्रन्थं भूषितम् । विष्टरं स्वयंज्ञेषु लक्षणं परिकीर्तितम्” ॥

२ अत्र वरः पादं गृहीत्वा पादी स्वयमेव प्रक्षालयेत् ॥ यजमानेन पाददानानन्तरं वर पादी न स्पर्शनीयी ।

रेणुः “विराज इति मंत्रेण तद् गृहीत्वोदकं वरः । पादो प्रक्षालयेत्तूष्णीं स तेन स्वयमात्मनः” ॥ अर्च्यः स्वयं प्रक्षालयति मंत्रलिङ्गाच्च इति हरिहर गदाधरः प्रभूतय ।

३ पश्चपुराणे — “ब्राह्मणो दक्षिणं पूर्वं पादं प्रक्षालयेत्तथा । क्षत्रादि प्रथमं सव्य-मिति धर्मानुशासनम्” ॥

वर कहे—“ॐ विष्टरं प्रतिगृह्णामि” ।

वर दाताके पाससे विष्टर उत्तराग्र घेरोंके नीचे रखे और यह मन्त्र बोले—

“ॐ व्वष्मोऽस्मि समानानामुद्यतामिव सूर्यः । इमं तमभि तिष्ठामि यो मा कश्चाऽभिदासति” ॥

यजमान एक पात्रमें दूर्वा, अक्षत, फल, पुष्प, चन्दन और जल लेकर—“ॐ अर्घोऽर्घोऽर्घः” इत्यन्येनोक्ते ।

यजमान कहे—“ॐ अर्घः प्रतिगृह्यताम् ।”

वर कहे—“ॐ अर्घ प्रतिगृह्णामि” ।

वर यजमानके हाथसे अर्घपात्रको ग्रहणकर मस्तक^१ के लगाय यह मन्त्र पढ़े— (ॐ आपःस्थ युष्माभिरिति मन्त्रस्य सिन्धुद्वीप ऋषिरनु-छटुच्छन्द आपो देवता अर्घग्रहणे विनियोगः) “ॐ आपःस्थ युष्माभिः सर्वान्कामानवाप्नवानि ।”

पात्रस्थ जलको ईशान दिशामें छोड़ता हुआ यह मन्त्र पढ़े— (ॐ समुद्रं व इत्यादि मन्त्रस्याथर्वण ऋषिर्बृहती छन्दो वरुणो देवता अर्घजलप्रवाहे विनियोगः) “ॐ समुद्रं वः प्रहिणोमि स्वां योनिमभि-गच्छत । अरिष्टाऽस्माकं व्वीरा मा पराऽसेच्चि मत्पयः” ।

यजमान आचमनीय पात्र लेकर—

“ॐ आचमनीयमाचमनीयमाचमनीयम्” । इत्यन्येनोक्ते ।

यजमान कहे—“ॐ आचमनीयं प्रतिगृह्यताम्” ।

वर कहे—“ॐ आचमनीयं प्रतिगृह्णामि” ।

वर यजमानहस्तसे आचमनीय पात्र लेकर अपने बायें हाथमें रख दक्षिण हस्तसे एक बार आचमन करे और दो बार बिना मन्त्र के ।

(ॐ आमाऽगन्निति परमेष्ठी ऋषिर्बृहतीच्छन्द आपो देवता आचमने विनियोगः)

तत्रमन्त्रः—“ॐ आमाऽगन्यशसा स ठं० सूज व्वर्चसा । तं मा कुरु प्रियं प्रजानामधिपतिं पशूनामरिष्ट तनूनाम्” ।

१ “अर्घं शिरसाऽभिवन्द्य प्रागुदवा निनयनमिति वासुदेवः ।

यजमान काँसीकी कटोरीमें शुद्ध^१ दधि मधु घृत मिलावे और दूसरी काँसीकी कटोरी से ढँक लेवे ।

पुररेहित कहे—“ॐ मधुपर्को मधुपर्को मधुपर्कः” ।

यजमान कहे—“ॐ मधुपर्कः प्रतिगृह्यताम्” ।

वर कहे—“ॐ मधुपर्कं प्रतिगृह्णामि” ।

यजमान के हाथमें स्थित मधुपर्क को खोलकर वर देखे और यह मन्त्र पढ़े—

(ॐ मित्रस्येति प्रजापतिर्खण्डिः पंक्तिश्छन्दो मित्रो देवता मधु-पर्कदर्शने विनियोगः :)

“ॐ मित्रस्य त्वा चक्षुषा प्रतीक्षे” ।

वर दोनों हाथोंसे ग्रहण करता हुआ यह मन्त्र पढ़े—

(ॐ देवस्यत्वेति ब्रह्मा ऋषिगर्णित्री छन्दः सविता देवता मधु-पर्कग्रहणे विनियोगः :)

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽशिवनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ता-भ्याम्प्रतिगृह्णामि” ।

फिर बायें हाथमें धर ऊपरकी कटोरी हटाकर दाहिने हाथ की अनामिका अंगुली से तीन^२ बार चलाकर अनामिका और अंगूठे से कुछ-कुछ भूमि पर फेंकता हुआ यह मन्त्र पढ़े—

(ॐ नमः श्यावेति प्रजापतिर्खण्डिगर्णित्री छन्दः सविता देवता मधुपर्कलोडने विनियोगः :)

“ॐ नमः श्यावास्यायान्नशने यत्तऽआविद्वं तत्ते निष्कृन्तामि” ।

१ दक्षस्मृती—“संशोधितं दधिमधु कांस्यपात्रे स्थितं घृतम् ।
कांस्येनान्येन संछन्नं मधुपर्कमितीर्यते” ॥

आपस्तम्बः—“सर्पिरेकगुणं प्रोक्तं शोधितं द्विगुणं मधु । मधुपर्कविधी प्रोक्तं सर्पिषा च समं दधि” ॥

दक्षस्मृती च—“पलमेकं घृतं चैव द्विपलं दधि चोच्यते । पलमेकं मधु कुर्यान्
मधुपर्कविधिः स्मृतः” ॥

२ योगीयाज्ञवल्क्यः—“संविधान करस्य तं मन्त्रेणालोड्य निक्षिपन् । त्रिस्त्रिवारं
भाष्यवलान्मन्त्राभ्यासकृतिस्तथा” ॥

इस मन्त्र से तीन बार प्रक्षेप कर फिर नीचे के मन्त्र से मधुपर्क भक्षण करता हुआ तीनों बार “यन्मधुनो” मन्त्र का पाठ करे—

ॐ यन्मधुन इति कौत्सन्धृषिर्मधुपर्कों देवता जगती छन्दो मधुपर्कप्राशने विनियोगः)

“ॐ यन्मधुनो मधव्यं परम ठ० रूपमन्नाद्यम् । तेनाहं मधुनो मधव्येन परमेण रूपेणान्नाद्येन परमो मधव्योऽन्नादोऽसानि” ॥

फिर उच्चिष्ट शेष मधुपर्क पात्रमें कुछ द्रव्य रखवाकर नाई या और किसी से उठवाकर बाहर धरवा दे । फिर वर तीन बार आचमन कर तर्जनी मध्यमा अनामिकासे मुखका स्पर्श करे ।

“ॐ वाङ्मऽआस्येऽस्तु” ।

तर्जनी अंगुष्ठसे नासिका स्पर्श करे—

“ॐ नसोर्मे प्राणःअस्तु” ।

अनामिका अंगुष्ठसे नेत्रोंका स्पर्श करे—

“ॐ अक्षणोर्मे चक्षुः अस्तु” ।

मध्यमा अंगुष्ठसे कानों का स्पर्श करे—

“ॐ कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु” ।

हाथके अग्रभाग से दोनों बाहुओंका स्पर्श करे—

“ॐ वाह्नोर्मे बलमस्तु” ।

दोनों हाथों से जंघाओं का स्पर्श करे—

“ॐ ऊर्वोर्मे ओजः अस्तु” ।

दोनों हाथोंसे सम्पूर्ण अङ्गोंका स्पर्श करे—

“ॐ अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु” ।

यजमान वर के साथ दूर्वादिल पकड़कर तीन बार यह कह—

“ॐ गौगौर्गौर्गौः” ।

वर यह मन्त्र पढ़े—(ॐ मातारुद्राणामिति वाम देव ऋषिर्य-
जुश्छन्दो गौदेवता अभिमन्त्रणे विनियोगः)

“ॐ माता रुद्राणां दुहिता वसूना ७७ स्वसाऽदित्यानाम
मृतस्य नाभिः । प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मागामनागामदिर्ति

व्वधिष्ट । मम (स्वस्य) चाऽमुष्य (अमुक शर्मणो यजमानस्य) च पाप्मा हतः ।” “ॐ उत्सृजत तृणान्यत्तु” । उच्चस्वरसे यह कहकर द्वार्दल (तृण) को ईशान^१ कोणमें छोड़ दे और गोदान का सङ्कल्प करे ।

अत्राऽचारात् गोदानम् ।

ततो देशकालौ संकीर्त्य— “मधुपर्कोपयोगिनो गोरुत्सर्गकर्मणः साद्गुण्यार्थं गोनिष्क्रयीभूतमिदं (गोतृप्त्यर्थं ^२तृणनिष्क्रय द्रव्यं वा) द्रव्यममुकगोत्राय अमुकशर्मणे ^३ब्राह्मणाय दातुमहमुत्सृज्ये” ।

“ॐ स्वस्ति” । ब्राह्मण कहे ।

अथाग्निस्थापनम्

ततो वरो वरानुमत्याऽन्यो ब्राह्मणो वा तुषकेशशर्करादिरहितायां हस्तमात्रपरिमितायां वेदिकायां चतुरस्रां भूमि कुशैः^४ परिसमुह्य, तान् कुशानैशान्यां परित्यज्य गोमयोदकाभ्यामुपलिप्य स्रुवेण (स्प्येनवा) प्रागग्रप्रादेशमात्रमुत्तरोत्तर क्रमेण त्रिरुलिख्य, उल्लेखनक्रमेणा-

१ “विद्याय वाऽपि गां कौशीं विद्धि तत्र समाप्य च । गामुदधृत्य च तां कौशी-मीशान्यां तान् कुशान् क्षिपेत्” ।

गृह्यसूत्रकारेणात्र गवालम्भनमुत्सर्जनं चोक्तम् । तत्र गवालम्भनस्य कलौ निषेधश्चोक्तः—

“अश्वालम्भं गवालम्भं सन्त्यासं पलपैतृकम् ।

देवराच्च सुतोत्पत्तिः कलौ पञ्च विवर्जयेत्” ॥

इति प्रतिषेधादुत्सर्जनं वरम् ।

सुमन्तुः— “ऋषिप्रणीतं न कलौ गोहत्याय समम् । वाचापि गोहिनोम्युक्त्वा प्रायश्चित्तं समाचरेत् । तेनैवावहितो मन्त्रे पूर्वपक्षः कलौयुगे । गां च साक्षात्समानीय यथा विद्धि समुत्सृजेत् । गोसमुत्सर्जनाशक्ती विप्रमानीय तत्र वै । ततश्च गौर्गोरित्यादितस्योपरि विद्धि चरेत् । मातेत्यादि पठित्वा च भक्ष्य दत्वा समुत्सृजेत् ।”

२ उत्सर्जनपक्षे गवे तृणदानमिति विश्वनाथभाष्ये ।

३ “यज्ञकर्मणि या धेनुर्द्रवं धेनुस्तर्थैव च । मधुपर्के च या धेनुर्या धेनुः कर्मसिद्धये एतत्प्रतिश्वेते विप्रे प्रायश्चित्तं न विद्यते ।”

४ “त्रिभिर्दर्भैः पांसूनपसार्वंति हरिहरः ।”

‘नामिकाङ्गुष्ठेन मृदमुद्रूत्य जलेनाभ्युक्ष्य, कांस्यपात्रयुग्मेन सम्पुटी-
कृत्य अग्निकोणादग्निमानीय, स्थण्डिलस्याग्नेयां दिशि निधाय,
नैऋत्यां दिशि किञ्चिदामात्^३ क्रव्यादरूपमङ्गारद्वयं परित्यज्य शेष-
मर्गिन वेदीमध्ये वाग्यत :— “ॐ अग्नि दूतं पुरो दध हव्यवाहमु-
पब्रुवे । देवाँआसादयादिह” ॥ १ ॥

इस भन्त्र से योजकनाम^४ की अग्नि को वेदी पर स्थापन करे और
समिधा (लकड़ी) अग्निरक्षार्थ रखे । जिन कांसीकी कटोरियोंमें आगें
लावे उनमें जल अक्षत^५ छोड़ दे ।

फिर कौतुकागार से वर अथवा मामा या और कोई कन्याको
मण्डपमें लाकर वरके दक्षिण^६ की तरफ चौकी पर बैठावे । कन्याके
सेवरा^७ बांधे, कन्या के हाथ से “गणपत्यादि देवताओं” की पूजा
कराकर हाथमें राखी बांधे तिलक करे ।

यजमान हाथमें जल लेकर संकल्प करे—

“कन्यादानकर्मणः पूर्वाङ्गत्वेन वराय वस्त्रचतुष्टयं सम्प्रददे” ।

कन्या पिता वर को चार वस्त्र देवे । वर उन वस्त्रों में से दो वस्त्र
कन्या के लिये देवे और दो वस्त्र स्वयं धारण करे । पहले वधु के लिये

१ “अङ्गुष्ठः पुष्टिदः प्रोक्तोऽनामिका धनदायिनी । द्वाभ्यां समुद्रूता रेखाः शुभदा
वरकन्ययोः । पासूनादाय रेखात आलेखनं यथाक्रमम् । अनामिकाङ्गुष्ठेन च प्रक्षेपस्तु
वहिर्भवेत्” ॥

२ “सम्पुटेनाग्निमानीय स्थाप्याग्नेदिशि कुण्डतः ।

“आमक्रव्यभुजी तस्मात् त्यक्त्या कुण्डे विनिक्षिपेत् ॥”

आदावग्निं कुण्डस्य स्थण्डिलस्य वा मध्य एवाऽग्निकोणे निधाय तत्रैव आमात्
क्रव्यादरूपमङ्गारद्वयं परित्यज्य शेषमर्गिन मध्ये स्थापयेत् ।

३ “विवाहे योजकः स्मृतः ।”

४ “अग्निमानीय पात्रे तु प्रक्षिपेदक्षतोदक्वम् । यदेवं नैव कुर्वीत यजमान भयावहम्” ॥

५ “वरस्य दक्षिणे भागे प्राडमुखीमुपवेशयेत्” ।

६ मेघातिथिः—“पृथङ्गमातृजयोः कार्यं विवाहस्त्वेकवासरे । एकस्मिन्मण्डपे कार्यं
पृथग्वेदिक्योस्तथा ।

पुष्पपट्टिकयोः कार्यं दर्शनं न शिरस्थयोः । भगिनीम्यामुभाम्यां च यावत्सप्तपदी
भवेत्” ॥ इति वचनात्पुष्पपट्टिका (सेवरा) वन्धनभूषि शास्त्र लिखितम् ।

अधोवस्त्र देता हुआ वर^१ मन्त्र पढ़े—

(ॐ जरां गच्छेति मन्त्रस्य प्रजापतिर्हषिस्त्रिष्टुप्छन्दो वासो देवता अधोवस्त्रपरिधाने विनियोगः)

“ॐ जरां गच्छ परिधत्स्व वासो भवाऽऽकृष्टीनामभिशस्ति पावा । शतं च जीव शरदः सुवच्चर्वा रथ्य च पुत्राननु संव्ययस्वाऽऽयुष्मतीदं परिधत्स्व व्वासः” ।

फिर उत्तरीय (ओडणा) वस्त्र कन्याके लिये देता हुआ वर मन्त्र पढ़े—

(ॐ या अकृन्तन्निति मन्त्रस्य प्रजापतिर्हषिर्जगतीछन्दो विधात्र्यो देवता उत्तरीय धारणे विनियोगः)

“ॐ या अकृन्तन्नवयन् याऽअतन्वत । याश्चदेवीस्तन्त्नुनभितो ततन्थ । तास्त्वा देवीर्जरसे संव्ययस्वाऽऽयुष्मतीदं परिधत्स्व व्वासः”

वर स्वयं वस्त्र (धोती) पहिने—

(ॐ परिधास्यै इति मन्त्रस्याथर्वण ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दस्तन्तवो देवता वासः परिधाने विनियोगः)

तत्रमन्त्र—“ॐ परिधास्यै यशोधास्यै दीर्घयुत्वाय जरदष्टि रश्मि । शतं च जीवामि शरदः पुरुची रायस्पोषमर्भि संव्ययिष्ये” ।

“यशसा” इस मन्त्रसे उत्तरीय (दुष्टा) धारण करे—

(ॐ यशसेति मन्त्रस्य प्रजापतिर्हषिर्जगतीछन्दो विधात्र्यो देवता उत्तरीयधारणे विनियोगः)

“ॐ यशसा मा द्यावापृथिवी यशसेन्द्रावृहस्पती । यशोभगश्च मा विद्यशो मा प्रतिपद्यताम्” ।

१ रेणु :— “कन्यावस्त्रपरीघाने तथैव चोत्तरीयोः । तथा समीक्षकाले तु पितु-निष्क्रमणे गृहात् । अस्मनो रोहणे चैव हस्तग्राहे तथैव च । तथा सप्तपदे चैव वधूमुद्धर्ये भिषे-चने । हृदयालम्भने चैव तथैव चाभिमन्त्रणे । दृढपुरुषोत्थापने च एतान्मन्त्रान् वरः पठेत्” ॥

वस्त्रपरिधानानन्तर वर कन्या दोनों दो बार आचमन^१ करें। यजमान दोनों को आज्ञा देवे कि परस्पर देखें—

“परस्परं समञ्ज्यातम्” ।

वर कन्या को देखता हुआ मन्त्र पढ़े—

(ॐ समञ्जन्तिवति मन्त्रस्याथर्वण ऋषिरनुष्टुप्छन्दो विश्वेदेवा देवता मैत्रीकरणे विनियोगः)

“ॐ समञ्जन्तु विश्वेदेवाः समापो हृदयानि नौ। सम्मात-रिश्वा सन्धाता समुदेष्ट्री दधातु नौ” ।

कन्या पिता द्रव्यपुष्पाक्षतादिः^३ कन्याके वस्त्रमें बांध वरके वस्त्रमें बांध देवे और यजमान स्वयं भी अपनी पत्नीके साथ ग्रन्थीबन्धन (गंठजोड़ा) करे। आचार^४ से कन्याका हस्तलेपन (पीला हाथ) करे द्रव्य हाथमें रखें। पुरोहित शाखोच्चारण^५ करे ।

१ वस्त्र परिधानानन्तरं द्विराचमनं विधानपारिजातके योगियाज्ञवल्क्य आह— “स्नात्वा पीत्वा क्षुते सुप्ते भुक्त्वा रथ्योपसर्पणे । आचान्तः पुनराचामेद्वासोविपरिधाय च” ।

२ अत्र—“समञ्जेथाम्” इति प्रयोगो न समीचिनः, अडजते, परस्मै पदित्वात् ॥
३ अत्र कन्यावररयोर्ग्रन्थिबन्धनमाचारप्राप्तं कन्यादानात्पूर्वमेव भवति । तथा च योगियाज्ञवल्क्य :—

“कन्यका सुदृशं पाशं द्रव्यपुष्पाक्षतादिकम् । निक्षिप्य तच्च सम्बध्य वरवस्त्रेण योजयेत् । वस्त्रैः संयोज्य तौ पूर्वं कन्यादानं समाचरेत् । दानेन युक्तयोः पश्चाद्विद्वयात्पाणिपीडनम् ।”

४ दक्ष स्मृतो—“वेदधर्मान् देशधर्मान् कुलधर्माश्च शाश्वतान् । धर्मशास्त्राद्विरुद्धांश्च न त्वजेज्जानदुर्बलं” । “कुलस्य देशस्य च चित्तवृत्तिं खंडनीया विदुषा कदाचित् । यो लोकशास्त्रानुमतः सधर्मो लोकोवलीयांस्तु द्वयोर्विरोधे । शास्त्राथाद्विवलवान् शिष्टाऽचारोत्र वहुसम्मतः । शिष्टाचारस्य कालेन विलुप्ताः श्रुतयो यतः” ॥

५ अत्र च सापिष्ठयनिर्णयार्थमेव गोत्रमुच्चारयन्ति भज्ज्ञास्तक शाखोच्चारणादिकं तु लाजहोमात्पूर्वमेव कुर्वन्ति मरुदेशयोः ।

कन्यादानम्

कन्यादाता^१ स्वदक्षिणभागमें^२ अपनी पत्नीको बैठाकर वरक पास उदङ्घमुख बैठ आचमन प्राणायाम कर हाथमें दूर्वा, चावल, सुपारी, पुष्प, चन्दन, द्रव्य और जल लेकर शुभ लग्नमें कन्यादान का संकल्प करे— “ॐ दाताऽहं वरुणो राजा द्रव्यमादित्य दैवतम् । वरोऽसौ विष्णुरूपेण प्रतिगृह्णात्वयं विधि:” ॥ १ ॥

“हरि: ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः— ॐ तत्सद्द्यैतस्य श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणो द्वितीये पराद्देहं, तदादौ श्रीश्वेतवाराहकल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे, अष्टाविंशतिमेकलियुगे कलिप्रथमचरणे, जम्बूद्वीपे भरतखण्डे तत्रापि परमपवित्रे भारत वर्षे, आर्यवित्तन्तर्गतेऽमुकदेशे (मरुसंज्ञके देशो) अमुकक्षेत्रे (कुमारिका नाम क्षेत्रे) अमुक नगरे (राजस्थान भण्डलान्तर्गत रत्नगढ़नाम्नि नगरे) श्री गङ्गायमुनयोरमुकभागे (पश्चिमे भागे) नर्मदाया अमुकभागे (उत्तरे भागे) चान्द्रसंज्ञकानां प्रभवादिषष्टिसम्बत्सराणां मध्येऽमुकनाम्नि सम्बत्सरे, श्रीमन्तृपविक्रमार्कसमयादमुकसंख्यापरिमिते विक्रमावदे, अमुकायने, अमुकतौ॑, अमुकमासे, अमुकपक्षे, अमुकतिथौ॒, अमुकवासरे, अमुकगोत्रः अमुकशम्राजिहं^३ (वर्मा गुप्तोऽहं वा) सपुत्रस्त्री बान्धवोऽहं—मम अस्या अमुकनाम्न्याः कन्याया अनेन वरेण धर्मप्रजया उभयोर्वशयोर्वशवृद्धर्यार्थं, तथा च मम समस्तपितृणां निरतिशयानन्दब्रह्मलोकावाप्त्यादि कन्यादानकल्पोक्तफलाऽप्तये अनेन वरेण

१ याजावल्यः— “पिता पितामहो ब्राता सकुल्यो जननी तथा । कन्याप्रदः पूर्वनाशेप्रकृतिस्थः परः परः । अप्रयच्छन्समाप्नोति भ्रूणहत्यामृतावृती” ॥

प्रहृतिस्थोऽविभिष्ठतचित्तः । सकुल्यः प्रत्यासत्तिकमेणादौ पितृकुलस्थस्तदभावे माता-महकुलस्थः सर्वाभावे जननी ।

२ स्मृतिसंग्रहे—“व्रतवन्धे विवाहे च चतुर्थी सह भोजने । व्रते दाने मखे श्राद्धे पत्नी तिष्ठति दक्षिणे । स्मृत्यन्तरे च—“गर्भार्थने विवाहे च ऋद्धी पुंसवने तथा । सीमन्ते धर्मेकाये च पत्नी कुर्याच्च दक्षिणे” ॥

३ हेमाद्री—“शर्मन्तं ब्राह्मणस्योक्तं वर्मन्तं शत्रियस्य तु । गुप्तान्तं चैव वैश्यस्य दासान्तः शूद्र एव हि” ॥

अस्यां कन्यायामुत्पादयिष्यमाणसंतत्या द्वादशावरान् द्वादशपरान्^१ पुरुषान् आत्मानं च पवित्रीकर्तुं श्रीलक्ष्मीनारायणप्रीतये ३ब्राह्मविवाह विधिना ३कन्यादानमहं करिष्ये”।

यजमान कन्या का स्पर्श कर प्रार्थना करे—

ॐ “कन्यां कनकसम्पन्नां कनकाभरणैर्युताम् । दास्यामि विष्णवे तुभ्यं ब्रह्मलोक जिगीषया ॥ १ ॥ विश्वस्मभरः सर्वभूताः साक्षिण्यः सर्वदेवताः । इमां कन्यां प्रदास्यामि पितृणां तारणाय च” ॥ २ ॥

यजमान वर के हाथ में सुग्रोक्षणादि करे—

“ॐ शिवा आपः सन्तु” इति जलम् । (सन्तु शिवा आप इति प्रतिवचनम् ।)

“ॐ सौमनस्यमस्तु” इति पुष्पम् । अस्तु सौमनस्यम् । “ॐ अक्षतं चारिष्टं^४ चास्तु” । इत्यक्षतान् । अस्त्वक्षतमरिष्टं च । “ॐ गन्धाः पान्तु” इति चन्दनम् । सौमज्ञलयं चास्तु । “ॐ अक्षताः पान्तु” आयुष्यमस्तु । “ॐ पुष्पाणि पान्तु” सौश्रियमस्तु ।

“ॐ यत्पापं यद्रोगो^५ दशुभमकल्याणं तद्दूरे प्रतिहतमस्तु” ।

यजमान कुछ जल पृथ्वी पर छोड़े ।

१ “द्वादशपूर्वान् द्वादशपरानात्मानं च कन्याप्रदः पुनाति” । (आ० ग० १-६)

२ मनुः—“आच्छाद्य चार्यमित्वा च श्रुतिशीलवते स्वयम् । आहूय दानं कन्याया ब्राह्मो धर्मः प्रकीर्तिः” ॥

३ सूतसंहितायाम्—“अश्वमेधः क्रतुर्यथा सर्वयजेषु चोत्तमः । एवं सर्वेषु दानेषु कन्यादानं प्रशस्यते” ॥

४ सं० ग०—“यावन्ति सन्ति रोमाणि कन्यायाश्च तनौ पुनः । तावद्वर्षसहस्राणि ब्रह्मलोके महीयते” ॥

अत्र कन्याविक्रियिणो निन्दामाह यमः—

“कन्या विक्रियिणो मूर्खरहः किल्विषकारिणः । पतन्ति नरके धोरे दहन्त्या सप्तमं कुलम् ॥”

भविष्य पुराणे च—“कुम्भीपाके महाघोरे यावच्चन्द्राकंतारकम् । पच्यते स्वकुलैः साद्वं कन्याविक्रिय कारकः” ॥

५ गो० ग०—“अरिष्टं सूतिका गृहम् ।”

६ अत्र रोगमित्यप पाठः । रोगशब्दस्य घञ्चन्तत्वेन पुलिङ्गत्वात् रोग इति पाठस्यैव साधीयस्त्वात् ।

कन्यादाता १शंखमे दूर्वा, अक्षत, फल, पुष्प, चन्दन, द्रव्य और जल लेकर देशकालौ संकीर्त्य अमुकगोत्रः अमुकशर्माहं (वर्षा गुप्तोऽहं वा) सपुत्रस्त्रीबान्धवोऽहं

“मम समस्तपितृणां निरतिशयानन्द ब्रह्मलोकावाप्त्यादि कन्यादान कल्पोक्तफलाऽप्तये अनेन वरेण अस्यां कन्यायामुत्पादयिष्यमाणसन्तत्या द्वादशावरान् द्वादशपरान् पुरुषानात्मानं च पवित्रीकर्तुं श्रीलक्ष्मीनारायणप्रीतये, अमुकगोत्रस्यामुकशर्मणः २प्रपौत्राय, अमुकगोत्रस्यामुक शर्मणः पौत्राय, अमुकगोत्रस्यामुकशर्मणः पुत्राय, अमुकगोत्रस्यामुकशर्मणः प्रपौत्रीम्, अमुकगोत्रस्यामुकशर्मणः पौत्रीम्, अमुकगोत्रस्यामुकशर्मणः पुत्रीम् (इस गोत्रोच्चारणको तीन बार पढ़े)

अमुकगोत्राय अमुकशर्मणे वराय श्रीधररूपिणे कन्यार्थिने अमुकगोत्रोत्पन्नाममुकनाम्नीभिमां^३ कन्यां श्रीरूपिणीं वरार्थिनीं यथाशक्त्यलंकृतां सोपस्करां प्रजापतिदैवतां देवाऽग्निगुरुत्राहृणसन्निधौ अग्न्यादि साक्षिकतया प्रजोत्पादनार्थं (सह धर्माच्चरणाय) पत्नीत्वेन तुभ्यमहं सम्प्रददे” ।

यजमान खड़ा^४ होकर शंखस्थ जल दक्षिणा और कन्याका दाहिना

१ वृहत्पाराशरः—“कन्यादान समारम्भे दाता शंखे समाददेत् । दूर्वाक्षतफलं पुष्पं चन्दनं जलमेव च ॥”

अङ्गिराश्च—“विना दर्भेश्च यत्स्नानं यच्च दानं विनोदकम् । असंख्यातञ्च यज्जाप्यं तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ॥”

२ सं० गणपतौ—“नान्दीमुखे विवाहे च प्रपितामहपूर्वकम् । वाक्यमुच्चारयेत् प्राज्ञो ह्यन्यत्र पितृपूर्वकम् । एतदेव त्रिसूच्यार्थं कन्यां दद्याद्याविविष्टं ॥”

ऋग्यशङ्कोऽपि—“वरगोत्रं समुच्चार्यं प्रपितामहपूर्वकम् । नामसंकीर्तयेद्द्विद्वान् कन्यायाश्चैवमेव हि ॥”

३ विं० ध०—“द्रव्यस्य नाम गृह्णीयाद् ददामीति ततो वदेत् । तोयं दद्यात्तथा दाता दाने विविरयं स्मृतः” ॥

४ विघ्नपारिजाते वृहस्पतिः—“कन्यादानं च गोदानमुत्तराधारमेव च । प्रातः सन्ध्याजपं चैव तिष्ठन्नेव हि कारयेत् ॥”

सं० ग०—“चतुष्पादं गृहं कन्यां छत्रं दासीं रथं तरम् । तिष्ठन्नेतान् द्विजो दद्याद् भूम्यादीनुपविष्य च” ॥

हाथ वर के दाहिने हाथमें देवे। फिर वर —“ॐ 'स्वस्ति'”। उच्चारण कर कन्याके हस्तको वर मन्त्रोच्चारण करता हुआ गृहण करे—

“ॐ द्वौस्त्वा ददातु पृथिवी त्वा प्रति गृहणातु”। “ॐ कोऽदात्क्षमाऽअदात्कामोऽदात्कामायादात् । कामो दाता कामः प्रतिग्रहीता कामैतत्ते”।

दाता प्रार्थना करे—

गौरीं कन्यामिमां विप्र ! (पूज्य !) यथाशक्ति विभूषिताम् ! गोत्राय शर्मणे तुभ्यं दत्तां विप्र ! समाश्रय ॥ (पत्नीत्वेन मया दत्तां गृहण च समाश्रय) ॥ १ ॥ कन्ये ममाग्रतो भूयाः कन्ये मे देवि पार्श्वयोः । कन्ये मे पृष्ठतो भूयास्त्वदानान्मोक्षमाप्नुयाम् ॥ २ ॥ कन्या लक्ष्मीः समाख्याता वरो नारायणः स्मृतः । तस्मात्कन्या प्रदानेन कृष्णो मे प्रीयतामिति ॥ ३ ॥ मम श्रेष्ठकुले जाता पालिता वत्सरैः शुभ्रैः । तुभ्यं विप्र ! (पूज्य) मया दत्ता पुत्रपौत्रविवर्धिनी ॥ ४ ॥

यजमान कन्यादानप्रतिष्ठार्थं **‘सुवर्णादिदक्षिणा** हाथमें लेफर सञ्चल्प करे—

“अद्य कृतैतत्कन्यादानकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थमिदं सुवर्णगुलीय-कमग्निदैवतं (दास्यमानां धेनुं वा तन्मूल्योपकल्पितं द्रव्यं) अमुक गोत्राय अमुकशर्मणे वराय दक्षिणात्वेन तुभ्यमहं सम्प्रददे”।

दक्षिणा वर के हाथ में देवे ।

वर कहे —“**ॐ स्वस्ति**”।

यहाँ वर श्री कन्यादान प्रतिग्रहजनित दोष निवारणार्थ गोदान करे—

१ हेमाद्री दानखडे — “प्रतिग्रहीता सावित्रि सर्वत्रैवानुकीर्तिंयेत् । ततस्तु कीर्तं-येत्साद्वं द्रव्येण द्रव्यदेवताम् । ततः समाप्येत्पश्चात्कामस्तुत्या प्रतिग्रहम् । तदन्ते कीर्तं-येत्स्वस्ति प्रतिग्रहविधिस्त्वयम्” ॥

२ स्मृतित्वे व्यास :—“श्रद्धान्वितः शुचिदन्तो दानं दद्यात्सदक्षिणम् । अदक्षिणन्तु यद् दानं तत्सर्वं निष्कलं भवेत् । दक्षिणाभिरुपेतं हि कर्म सिद्ध्यति मानवे । सुवर्णमेव सर्वासु दक्षिणासु विधीयते” ॥

सुवर्ण काञ्चनमात्रं देयं नपुंसकनिर्देशात् ।

“मम गृहीतकन्यादानप्रतिग्रहजन्यदोषपरिहारद्वारा^१ शुभफल-प्राप्त्यर्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थञ्च इदं गोनिष्कयीभूतं द्रव्यं रजतं चन्द्र-दैवतममुकगोत्राय अमुकशर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे”।

ब्राह्मण के हाथ में देवे ।

ब्राह्मण कहे—“ॐ स्वस्ति”

वर वधू का हाथ पकड़े हुए यह मन्त्र बोले—

“ॐ यदैषि मनसा दूरं दिशोऽनु पवमानो वा । हिरण्यपर्णो वैकर्णः स त्वा मन्मनसां करोतु अमुकिदेवि ।”

वधूका^२ नाम बोलता हुआ अग्नि के पास आवे ।

यहाँ वेदी के दक्षिण दिशा में एक दृढ़ पुरुष (ब्राह्मण) जल का कलश (लोटा) कन्धे पर धरकर चुपचाप अभिषेक पर्यन्त खड़ा होवे । लोटे में दक्षिणा गेर देवे ।

यजमान कहे—“ॐ परस्परं समीक्षेथाम् ।”

वर इन मन्त्रों से वधू को देखे और मन्त्र पढ़े—

“ॐ अघोरचक्षुरपतिघ्न्येधि शिवा पशुभ्यः सुमना: सुवच्चाः । वीर-सूर्द्देवकामा स्योना शन्मो भव द्वीपदे शं चतुष्पदे” ॥ १ ॥

“सोमः प्रथमो विविदे गन्धर्वो विविदऽउत्तरः । तृतीयोऽग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजा:” ॥ २ ॥

“सोमोऽदद्गन्धर्वाय गन्धर्वोऽदद्गनये । रयिञ्च पुत्रांश्चादाद-ग्निर्मह्यमयोऽइमाम्” ॥ ३ ॥

१ अत्र केचन कन्यादानप्राहणजन्यप्रत्यवायं नाभिमन्यन्ते, अतएव कन्याप्रतिग्रह-लघ्वप्रभोदवृद्धये गोदानं करिष्ये इति संकल्पयन्ति तत्र समीचीनम् । शास्त्रेषु कन्यादान प्रतिग्रहस्यापि प्रत्यवायश्वरणात् । ननु सर्वत्र प्रतिग्रहो ब्राह्मणस्यैवोक्तो न तु क्षत्रियादेरिति चेन्न सर्ववर्णनां कन्याप्रतिग्रहे दोषाभावस्थोकत्त्वात् ।

तथा च भूर्याण्डे—“कन्याप्रतिग्रहः सर्ववर्णानां नातिदोषकृत् । भवेद्यदि च तं कृत्वा भूरि भूरिप्रदो भवेत् । कन्याप्रतिग्रहं कृत्वा ब्राह्मणस्तु यथाविधि । कम्रणोऽन्ते ततः कुर्यात् भूरिदानं दृढत्रतः ॥ कन्या प्रतिग्रहस्तस्मात् शाम्यते भूरिदानतः । सर्वेरपि तथा कृत्वा कन्यादानप्रतिग्रहम् ॥ भाव्यन्नानान्नवसनभूमिदानपरैर्नरैः” ॥

२ “लक्ष्मीनाम्नीं त्वसौ स्थाने वधूनामादिशेष्वरः” । इतिरेणुः

“सा नः पूषा शिवतमामेरय सा नऽरुद्दशती विहर । यस्या-
मुशन्तः प्रहरामशेपं यस्यामु कामा वहवो निविष्टचै” ॥ ४ ॥

वर और वधू परस्पर निरीक्षण करे ।

(तदनन्तर वर वधूको आगे कर अग्निकी प्रदक्षिणा) कर
स्वदक्षिण^१ वधू को बैठा और स्वयं भी बैठ ब्रह्माका वरण करे ।

ब्रह्मवरणम्

वर स्वदक्षिण हाथमें पुष्प, चन्दन, ताम्बूल, द्रव्य, वस्त्र और जल
लेकर सज्जन्त्य करे—

“अद्य कर्तव्यविवाह होमकर्मणि कृताकृतावेक्षणादि ब्रह्मकर्मकर्तुम-
मुकगोत्रममुकशर्मणं ब्राह्मणमेभिः पुष्पचन्दनताम्बूलद्रव्यवासोभिर्ब्रह्म-
त्वेन त्वामहं वृणे” ।

ब्रह्मा कहे—“ॐ वृतोऽस्मि” ।

ब्रह्मा के राखी बांधे और तिलक करे ।

वर कहे—“यथा चतुर्मुखो ब्रह्मा सर्ववेदधरः प्रभुः । तथा त्वं मम
यज्ञेऽस्मिन् ब्रह्मा भव द्विजोत्तम” ॥ १ ॥ इति प्रार्थयेत् ।

वर कहे—“यथा विहितं कर्म कुरु” ।

ब्राह्मण कहे—“यथाज्ञानं करवाणि” ।

ततोऽनेदक्षिणतः शुद्धमासनं दत्वा तदुपरिप्रागप्रान् ^२कुशानास्तीर्य
ब्रह्मणमग्निप्रदक्षिणक्रमेणानीय “अत्र त्वं मे ब्रह्मा भव” इत्यभिधाय
कल्पितासने उपवेशयेत् ।

तदभावे पञ्चाशत्कुशनिर्मितं वा स्थापयेत् ।

(अग्नि से दक्षिण^३ शुद्ध आसन दे (पत्ता धर) उसके ऊपर पूर्वग्रि

१ लध्वाशवलायन स्मृतौ— “दम्पती तु व्रजेयातां होमार्थं चैव वेदिकाम् । वरस्य
दक्षिणे भागे तां वधूमुपवेशयेत् ॥”

“प्रदक्षिणमग्निं पर्याणीयैके” (पार० गृ० १-५-१) इति वचनादत्र प्रदक्षिणं
विधेयम् । अद्य वे तु इदं प्रदक्षिणं न प्रचलति तत्र कारणं न विद्म ।

२ ब्रह्मण आसनं त्रिभिः कुशमर्शवति, तथा चोक्तमग्निगुहो— “ब्रह्माचार्यप्रणीता
नामासनं च त्रिभिः कुशः? न द्वाभ्यां नैकदर्भेण कृपयो वहवो विदुः” ॥

३ “दक्षिणातोऽग्नेरुद्दड्मुखस्तूष्णीमास्ते ब्रह्माऽहोमात्राग्रेषु कुशेषु” । (खा०
गृ० १-१-२३)

कुशाओं को रखे । फिर कुछ कुशाओं का ब्रह्मा बना कर अग्नि के प्रदक्षिणक्रम से लाकर स्थापित करे ।)

अथाऽस्त्वार्यवरणम्^१

यजमान दक्षिण हाथमें पुष्प, चन्दन, ताम्बूल, द्रव्य, वस्त्र और जल लेकर—

“अद्य कर्तव्य विवाहहोमकर्मणि आचार्यकर्मकर्तुममुकगोत्रममुक-
शमणिं ब्राह्मणमेभिः पुष्पचन्दनताम्बूलद्रव्यवासोभिराचार्यत्वेन त्वा-
महं वृणे ।”

आचार्य कहे—“ॐ वृतोऽस्मि” ।

इसी प्रकार यजमान और वर ऋत्विक् होता का भी वरण करे ।

(यहाँ मरुदेशीय प्रथाके अनुसार पुरोहित मेंहदीका गोला बनाकर और दो पैसा रख कन्याके दक्षिण हाथ में धर वरके दक्षिण हाथको ऊपर रख नाल (मोली) से बांध वस्त्रसे ढक देवे ।)

कुशकण्डिका

ततोऽग्नेष्टरतः पश्चिमभागे प्रणीतापात्रं पुरतः कृत्वा वारिणा
परिपूर्य कुशैराच्छाद्य ब्रह्मणो मुखमवलोक्य अग्नेष्टरतः कुशोपरि
निदध्यात् ।

(प्रणीतापात्रको आगे कर जलसे भर कुशाओंसे ढक ब्रह्माका मुख अवलोकन कर अग्निसे उत्तर कुशाओंके ऊपर रख देवे ।)

परिस्तरणम्^२

ततः पूर्वादिदिक्षु अग्नेः परितस्त्रिभिस्त्रिभिश्चतुर्भिश्चतुर्भिर्वा-

१ “यजमानः शुचिः स्नातः श्रद्धायुक्तो जितेद्रियः । पादशीचार्घवस्त्राद्यैराचार्य-
दीन् समर्चयेत् ।” इति वशिष्ठवचनेन आचार्यादीनामपि वरणं कुर्यात् ।

२ प्र०—चिन्तामणी—“वहितस्तु परित्यज्य द्वादशाङ्गुलतो वहिः । परिस्तरणद-
मस्तु षोडश द्वादशापि वा ॥

“ईशानकोणमारम्प्य पुनरीशानकोणगा । कुशैस्त्रिभिस्त्रिभिः कुर्यात्सव्येनाग्ने-
परिस्तृतिः” इति ।

सूत्रेषु सर्वत्र दर्भेरिति वहुवचनश्रवणात् कपिङ्गलाधिकरणन्यायेन त्रित्वसंख्यैव
याहा, न चतुष्प्रवादि । प्रथमातिक्रमे मानाभावात् अनवस्थाप्रसङ्गाच्च । अतस्त्रित्वसंख्यैव
स्वीक्रियते याज्ञिकैः ।

कुशैरुदगग्रेराग्नेयादीशानान्तम् । प्रागग्नेनैर्नृत्यादाग्नेयान्तम् । उदग-
ग्रैनैर्नृत्याद्वायव्यान्तम् । प्रागग्नेवर्यव्यादीशानान्तम् । इति परिस्त-
रणं कृत्वा इतरथाऽऽवृत्तिं^१ कुर्यात् ।

(पूर्वादि दिशाओंमें अग्निके चारों तरफ १२ या १६ कुशायें लेकर उदगग्र अग्निकोणसे ईशान तक ३-या ४ कुशायें रखें । फिर प्रागग्र नैर्नृत्यकोणसे अग्नि कोणतक ३-या ४ कुशा रखें । उदगग्र नैर्नृत्यकोण से वायव्यतक ३-या ४ कुशारक्खे । फिर प्रागग्र वायव्यसे ईशानतक ३-या ४ कुशा रखें । इस तरह परिस्तरण करके उसी क्रमसे उलटा हाथ लावे)

ततोऽग्नेरुत्तरतः पश्चिमदिशि पवित्रच्छेदनार्थं कुशत्रयम् । पवि-
त्रार्थं साग्रभग्नन्तर्गर्भकुशपत्रद्वयम् । प्रोक्षणीपात्रम् । आज्यस्थाली ।
सम्मार्जनार्थं कुशत्रयम् । उपयमनार्थं कुशत्रयम् । समिधस्तिस्त्रः ।
लुब्धः । गव्यमाज्यम्^२ । पूर्णपात्रम्^३ (षट् पञ्चाशदधिकयजमानमुष्टि-
शतद्वयपरिमिततण्डुलाद्यश्वपूर्णम्) दक्षिणा^४ (कर्मेष्योगिनी हिरण्यादि
दक्षिणा) वरो वा (गौब्राह्मणस्य वरः) एतानि वस्तूनि पवित्रच्छेदन-
कुशानां पूर्वपूर्वदिशिक्रमेणाऽऽसादनीयानि ।

(अग्निसे उत्तर पश्चिम दिशामें पवित्रच्छेदनार्थं ३ कुशा । पवित्रके

१ परिस्तरण — पर्यग्निकरण — पर्युक्षणादि कृते यत्र परिस्तरणादि समाप्तिस्त-
त्यानादप्रादक्षिण्येन परिस्तरणादि प्रारंभ स्थानं प्रति हस्तस्यानयनं कुर्यादित्यर्थः । देवेषु
कर्मसु यत्र प्रदक्षिणाऽऽवृत्तिरित्युच्यते ।

पित्र्येकर्मणि तु अप्रदक्षिणावर्तनमेव विहितं तत्र तत् कृत्वा एकां प्रदक्षिणावृत्तिं कुर्वन्ति
सैव विपरीताऽऽवृत्तिरित्याऽवृत्तिरित्युच्यते ।”

२ कु० भाष्ये — “उत्तमं गोघृतं ज्ञेयं मध्यमं महिषी घृतम् । अघमं छागली जातं
तस्माद्गव्यं प्रशस्यते ॥”

३ यज्ञपाशवे — “अष्टमुष्टि भवेत्किञ्चत्किञ्चिदप्यदष्टौ च पुष्कलम् । पुष्कलानि च
कृत्वारि पूर्णपात्रं तदुच्यते ।”

पुरश्चर्यार्णवे च — “द्वात्रिंशत्पलमानेन निर्मितं ताम्रपात्रकम् । तण्डुलैस्तत्समापूर्यं
सहिरण्यं सदक्षिणम् । दद्याद्विप्राय तत्पृष्ठं पूर्णपात्रमितीरितम् ॥”

४ पुरश्चर्यार्णवे — “यथाशक्ति हिरण्यादि द्रव्यं वाथ गवादिकम् ॥”

लिये मध्यपत्र रहित २ कुशा । प्रोक्षणीपात्र । घृतके लिये पात्र । सुवा पोंछनेके लिये ३ कुशा । हाथमें रखने के लिये ३ कुशा । ३ प्रादेशमात्र समिधायें । सुवा । गोघृत । चावलों से भरा हुआ पूर्णपात्र १ ये चीजें पवित्रच्छेदन कुशाओंके पूर्व पूर्व स्थापन करे)

अथ तस्यामेव दिशि असाधारणवस्तून्युपकल्पनीयानि-तत्र शमी-पत्रमिथा लाजाः, दृष्टुपलम्, कुमारीभ्राता, शूर्पः, दृढपुरुषः । अन्यदर्पि तदुपयुक्तमालेपनादि द्रव्यम् ।

(जांटीक पत्ते मिली हुई खील, पर्वत फल (पत्थरकी लोडी) कन्या का भाई, छाज, दृढपुरुष और कोई कामकी वस्तु मेहन्दी आदि सब स्थापन करे)

ततः पवित्रच्छेदकुशैः पवित्रे छित्वा, सपवित्रकरेण प्रणीतोदकंत्रिः प्रोक्षणीपात्रे निधाय अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यामुत्तराग्रे पवित्रे गृहीत्वा त्रिरूपवनम् ।^१

ततः प्रोक्षणी पात्रस्य सव्यहस्ते करणम् । अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यां पवित्रे गृहीत्वा त्रिरूपिङ्गनम् । प्रणीतोदकेन प्रोक्षणी प्रोक्षणम् । प्रोक्षणीजलेन यथासादितवस्तुसेचनमग्निप्रणीतयोर्मध्ये सपवित्रं^२ प्रोक्षणी-पात्रं निदध्यात् ।

(पवित्र छेदनकी तीन कुशाओंसे दो पत्र कुशाके पवित्रों के लिये काटे । कटी हुई कुशाओंका पवित्रा बना लेवे । सपवित्र हस्तसे प्रणीताके जलको तीन बार प्रोक्षणीमें डाल कर अनामिका और अंगूठेसे पवित्रे को उत्तराग्र पकड़ तीन बार प्रोक्षणीका उत्पवन करे । फिर प्रोक्षणी-पात्रको वायें हाथमें ले अनामिका और अंगुष्ठसे उत्तराग्र पवित्र ग्रहण कर तीन बार ऊपरको उछाले । फिर प्रणीताके जलसे प्रोक्षणीक-

^१ शौनकः—उत्पुनीयात्पवित्राभ्यामापस्तुष्णीं त्रिरेवतु । “अङ्गुष्ठोपकनिष्ठिकाभ्यामुत्तानाभ्यां पाणिभ्यामुत्पुनाति ॥” (आश्व० गृ० १-३-३)

“उत्तानेन तु हस्तेन प्रोक्षणं समुदाहृतम् ।”

^२ अग्निगुह्ये— “निदध्यात्प्रोक्षणीपात्रं सपवित्रमसञ्चरे । यदन्तरं प्रणीताम्ब्ये रसञ्चरस्तु स स्मृतः ।

प्रोक्षण करे । प्रोक्षणीके जलसे सब वस्तुओंको छीटें देकर अग्नि और प्रणीताके बीचमें प्रोक्षणीपात्रको रख देवे)

ततः आज्यस्थाल्यामाज्यं^१ निरूप्य अङ्गारानुत्तरतोऽपोह्य तेषु
आज्यस्थालीं संस्थाप्य अर्धश्चिते आज्ये तृणं प्रज्वलय्य आज्यस्य सम-
न्तात्प्रदक्षिणं^२ भ्रामयित्वा वह्नि प्रक्षिप्य इतरथावृत्तिं कुर्यात् ।

(घृतपात्र (कटोरे) में घृत डाल कर अङ्गारोंको उत्तरकी तरफ इकट्ठा कर उन पर घृतपात्र रखे । आधा धी तपने पर एक तृण जलाकर घृतके चारोंतरफ प्रदक्षिण क्रमसे फेर अग्निमें छोड़ देवे और हाथको उसी क्रमसे वापिस वहीं लावे)

ततो दक्षिणहस्तेन लुवमादाय अधोमुखं स्तुवं त्रिः तापयित्वा
वामहस्ते लुवमूर्ध्वमुखं कृत्वा दक्षिणहस्तेन सम्मार्जनकुशानामग्रैरन्तरतो
मूलैर्वाह्यातः स्तुवं सम्मृज्य “तान्कुशानग्नौ प्रक्षिप्य प्रणीतोदक्षेनाभ्युक्ष्य
पुनः पूर्ववत्प्रतप्य स्वदक्षिणतो निदध्यात् ।

(दक्षिण हाथमें स्तुव लेकर अधोमुख स्तुवको तीन बार तपावे फिर स्तुवको ऊर्ध्वमुख करके दक्षिण हस्तसे सम्मार्जन कुशाओंके अग्रभागसे स्तुवेके अग्रभागको मध्यसे मध्यको, मूलसे मूलको सम्मार्जन कर कुशाओंको अग्निमें गेर देवे । फिर प्रणीताके जलसे अभ्युक्षणकर फिर तपाकर अपने दक्षिण ओर रखें)

तत आज्यमुत्तार्य उत्तरतः स्थापयित्वा हस्तद्वयस्याऽनामिकाङ्ग-

१ “अपरेण पवित्रान्तर्हितायामाज्यस्थाल्यामाज्यं निरूप्य” । (आ० ग० १-१०-२३)

२ कारिकायाम् — “अपोह्योत्तरतोऽङ्गारान् तेष्वधिश्रित्य तद् घृतम्” ।

३ “अग्नेरुल्मुकमादाय प्रारभ्येशान कोणतः ? पुनरानीय कोणान्तमाज्यादि परितः शनैः । प्रदक्षिणं भ्रामयित्वा वह्निमध्ये त्यजेत्तु तत् ॥”

४ “ततो दक्षिणहस्तेन स्तुवमादाय तं ततः । तापयित्वा यथान्यायं प्राञ्चमग्नावधो मुखम् । सब्ये घृत्वा तमुत्तान पुष्करं दक्षिणेन तु । कुशानादाय सम्मार्जनस्तद्ग्रेष्टरि क्रमात् । मूलादारभ्य वक्त्रान्तं सम्मृज्य मुखतः पुनः । तन्मूलैर्मूलपर्यन्तं सम्मृज्याधोऽपि तास्त्यजेत् ॥”

५ सं० ग०— “पुनः प्रतप्य ती मन्त्री दर्भानग्नौ विनिक्षिपेत् । आत्मनो दक्षिणे भागे स्थापयेत्ती कुशान्तरे ।” (ती सुक्लस्त्री)

छाभ्यामुत्तराग्रे पवित्रे गृहीत्वा आज्यं त्रिलूप्यु^१ अवेक्ष्य सत्यपद्मवे
तन्निरसनं कृत्वा पूर्ववत्पवित्राभ्यां प्रोक्षणीजलमुत्पूय प्रोक्षणीषु पवित्रे
निदध्यात् ।

(घृतको अग्निसे उतार कर उत्तरकी तरफ रखें और दोनों हाथों
के अनामिकां गुण्ठसे पवित्र लेकर धीको ऊपर तीन बार उछाले । फिर
देख धीके अन्दर कृमि कीटादि होय तो निकाल देवे । फिर प्रोक्षणीजल
से ऊपरको छीटे देवे)

तत उपयमनकुशानादाय वामहस्ते कृत्वा उत्तिष्ठन्^२ प्रजापांति
मनसा ध्यात्वा घृतावताः प्रागग्रास्तित्तः समिधस्तूष्णीमग्नौ (वाम-
करान्वारव्येन^३ दक्षिणहस्तेन) क्षिपेत् ।

(उपयमन कुशाभाँको बायें हाथमें लेकर खड़ा हो प्रजापतिका
मनमें ध्यान कर घृताक्त तीन समिधाओंको चुपचाप अग्निमें गेरे)

तत उपविश्य सपवित्र प्रोक्षण्युदकेन ईशानाद्युत्तरपर्यन्तं प्रद-
क्षिणक्षेणाऽग्निं^४ पर्युक्ष्य इतरथावृत्तिं च कृत्वा पवित्रे प्रणितापात्रे
निदध्यात् ।

ततो योजकानामाग्ने सुप्रतिष्ठितो वरदोभव । इत्यग्निं सम्पूज्य
दक्षिणं^५ जान्वाच्य कुशेन ब्रह्मणाऽन्वारव्योमोनी^६ (मूलमध्यमाग-

१ “उदग्रे अङ्गुष्ठाभ्यामनामिकाभ्यां च सङ्गृह्य त्रिराज्यमुत्पुनाति ॥” (चा. गृ०
१-१-१४)

२ “तिष्ठन् समिधः सर्वं मध्ये ।” (का० शौ० १८-३-१०)

“लाजहोमं समिद्वोमं मूच्छिनहोमं तर्येव च ।

पूर्णहृति वसोदरां तिष्ठतैव हि कारयेत् ॥

३ “अत्रैकपाणिना समिद्वोमस्य निषेषेन सव्यपाण्यन्वारव्य दक्षिणपाणिना होर्मविधि-
र्गम्यते” ॥ इति प्रयोगपारिजाते ।

४ सं० ८०—“ऊर्वपादावघोवक्त्रः प्राङ्मुखो हव्यवाहनः । ईदृशे वह्निरूपे तु आहृतिः
कस्य दीयते । सपवित्राम्बुहस्तेन वह्नेः कुर्यात्प्रदक्षिणम् । हव्यवाद् सलिलं दृष्ट्वा विभीतः
सम्मुखो भवेत् ॥”

५ “न मुक्तकेशो जुहुयान्नानिपातितजानुकः । अनिपातितजानुस्तु राक्षसैर्हित्यते हविः” ॥

६ “स्नास्यतो वहणः कान्ति जुह्वतोऽग्निः श्रियं हरेत् । मूञ्जतो मृत्युरायुस्यं तस्मान्मौनं
त्रिषु स्मृतम्” ॥ मौनलोपे—“व्याहृत्य वैष्णवं मन्त्रं जपेत्” (का० शौ० २-२-६) इति
वचनाद् वैष्णवमन्त्रपाठः प्रायश्चित्तम्)

‘योर्मध्येन) सुवं गृहीत्वा तस्मिद्वितमेऽग्नौसुवेणा ज्याहुतीर्जुहुयात् । तत्राधारादारभ्य द्वादशाहुतिषु तत्सदाहुत्यनन्तरं सुवावस्थितहुतशेष-घृतस्य प्रोक्षणीपात्रे प्रक्षेपेः ।

(फिर बैठकर सपवित्र प्रोक्षणीके जलसे प्रदक्षिणक्रमसे अग्निका पर्युक्षण कर इतरथावृत्ति करे । पवित्रेको प्रणितापात्रमें रख दे । फिर योजक नामक अग्निकी पूजा कर दक्षिण जंघाको मोड़ कुशाका ब्रह्मासे अन्वारब्ध कर मौन हो सुवसे प्रज्वलित अग्निमें आहुति घृतकी देवे । सुवावस्थित शेष घृत प्रोक्षणी पात्रमें गेरे)

अथाज्यहोमः

“३० प्रजापतये स्वाहा” इदं प्रजापतये न भम । इति मन्त्रं मनसोच्चारयेत् ।

“३० इन्द्राय स्वाहा” इदमिन्द्राय न भम । इत्याधारौ ।

“३० अग्नये स्वाहा” इदमग्नये न भम ।

“३० सोमाय स्वाहा” इदं सोमाय न भम । इत्याज्यभागौ ।

“३० भूः स्वाहा” इदमग्नये न भम ।

“३० भुवः स्वाहा” इदं वायवे न भम ।

“३० स्वः स्वाहा” इदं सूर्याय न भम ।

सर्वं प्रायशिच्छत् होमः

“३० त्वन्नोऽग्ने व्वरुणस्य व्विद्वान् देवस्य हेडोऽवयासिसीष्ठाः ।

१ विधानमालायाम् “अग्नेः धृतो विनाशाय धृतो मध्ये प्रजाक्षयः । मूले घृतस्तु होतुस्तु मूर्ति द्यातस्त्वां ध्रुवम् । अग्नान्मध्याच्च मूले तु मूलान्मध्याच्च मध्यमः । सूर्यः प्रधायों विद्वद्द्विः सर्वकामार्थं सिद्धये” । सुवद्वडस्य पञ्चभागान् कृत्वा द्वितीयभागे सुवधारणमित्यर्थः ।

२ कात्यायनः— “योऽनर्चिषि जुहोत्यग्नौ व्यज्ञारिणि च मानवः । मन्त्राग्निरामयावीच दरिद्रश्चापि जायते ॥ तस्मात्समिद्दे होतव्यं नासमिद्दे कदाचन । आरोग्यमिच्छतायुश्च श्रियमात्यन्तिकीं तथा ।”

३ “आहुतिस्तु सुवादीनां सुवेणाधोमुखेन च ।

हुनेत्तिलाद्याहुतीश्च दैवनोत्तानं पाणिना” ॥

हविप्रसेपः कुण्डे स्थिष्ठिले वाऽन्तः कार्यः— “नहि वाहुहुतं देवाः प्रतिगृह्णन्ति कर्हचित् ।” इति वचनात् ।

यजिष्ठो व्वक्त्रितमः शोशुचानो व्विश्वा द्वेषा १५सि प्र मुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा” ।

इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥ १ ॥

“३५ स त्वं नोऽग्नेऽवमो भवोती नेदिष्टोऽस्याऽउषसो व्युष्टौ । अव यक्ष्व नो व्वरुण ठं० रराणो व्वीहि मृडीक ठं० सुहवो नऽएधि स्वाहा” ।

इदमग्निवरुणाभ्यां न मम ॥ २ ॥

“३६ अयाश्चाग्नेऽस्य नभिशस्तिपाश्च सत्यमित्वमयाऽअसि । अया-नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषज १५ स्वाहा” ।

इदमग्नये अयसे न मम ॥ ३ ॥

“३७ ये ते शतं व्वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः । तेभिर्नोऽअद्य सवितोत विष्णुविश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा” ॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्धूच्यः स्वर्केभ्यश्च न मम ॥ ४ ॥

“३८ उदुत्तमं व्वरुण पाशमस्मदवाधमं व्विमध्यम १५ श्रथाय । अथा व्वयमादित्य व्वते तवानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा” ॥ इदं वरुणायादित्यायादितये न मम ॥ ५ ॥

इति सर्वप्रायशिच्चत् होमः ।

ब्रह्मासे अन्वारब्धं हटाकरं हवनं करे ।

राष्ट्रभृद्धोमः^१

“३९ ऋताषाढ् ऋतधामाग्निर्गन्धर्वः स न १ इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा व्वाद्” । इदमृतासाहे ऋतधामस्नेऽग्नये गन्धर्वाय न मम ॥ १ ॥

“४० ऋताषाढ् ऋत धामाग्निर्गन्धर्वस्तस्यौषधयोऽप्सरसो मुदो नाम ताभ्यः स्वाहा” । इदमोषधिभ्योऽप्सरोभ्यो मुदभ्यो न मम ॥ २ ॥

“४१ स ६ हितो व्विश्वसामा सूर्यो गन्धर्वस्तस्य मरीचयोऽप्सर-

१ तथा च कात्यायनः—“विवाहे होमयेन्नित्यं राष्ट्रभृद् द्वादशाहुतीः । जयाहुती-दंशत्रींश्च होमयेत्तत्र चेच्छया । अष्टादशापि जुहुयादभ्यातानाहुतीस्तथा ॥”

सऽआयुवो नाम ताभ्यः स्वाहा” । इदं मरीचिभ्योऽप्सरोभ्य आयुभ्यो
न मम ॥ ३ ॥

“ॐ स हि॒ हितो व्विश्वसामा सूर्योऽग्न्धर्वः स न इदं ब्रह्मक्षत्रं
पातु तस्मै स्वाहा व्वाट्” । इदं स हि॒ हिताय विश्वसाम्ने सूर्याय
ग्न्धर्वाय न मम ॥ ४ ॥

“ॐ सुषुम्णः सूर्यरश्मश्चन्द्रमा ग्न्धर्वः स न इदं ब्रह्मक्षत्रं पातु
तस्मै स्वाहा व्वाट्” । इदं सुषुम्णाय सूर्यरश्मये चन्द्रमसे ग्न्धर्वाय
न मम ॥ ५ ॥

“ॐ सुषुम्णः सूर्यरश्मश्चन्द्रमा ग्न्धर्वस्तस्य नक्षत्राण्यप्सरसो
भेकुरयो नाम ताभ्यः स्वाहा” । इदं नक्षत्रेभ्योऽप्सरोभ्यो भेकुरिभ्यो
न मम ॥ ६ ॥

“ॐ इषिरो व्विश्वव्यचा व्वातो ग्न्धर्वः स न इदं ब्रह्मक्षत्रं पातु
तस्मै स्वाहा व्वाट्” । इदमिषिराय विश्वव्यचसे वाताय ग्न्धर्वाय
न मम ॥ ७ ॥

“ॐ इषिरो व्विश्वव्यचा व्वातो ग्न्धर्वस्तस्यापो ऽअप्सरसऽऊर्जो
नाम ताभ्यः स्वाहा” । इदमद्भ्योऽप्सरोभ्य ऊर्ज्यो न मम ॥ ८ ॥

“ॐ भुज्युः सुपणो यज्ञो ग्न्धर्वः स न इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै
स्वाहा व्वाट्” । इदं भुज्यवे सुपणाय यज्ञाय ग्न्धर्वाय न मम ॥ ९ ॥

“ॐ भुज्युः सुपणो यज्ञो ग्न्धर्वस्तस्य दक्षिणा ऽअप्सरसस्तावा
नाम ताभ्यः स्वाहा” । इदं दक्षिणाभ्योऽप्सरोभ्यस्तावाभ्यो न
मम ॥ १० ॥

“ॐ प्रजापतिव्विश्वकर्मा मनो ग्न्धर्वः स न इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु
तस्मै स्वाहा व्वाट्” । इदं प्रजापतये विश्वकर्मणे मनसे ग्न्धर्वाय न
मम ॥ ११ ॥

“ॐ प्रजापतिव्विश्वकर्मा मनो ग्न्धर्वस्तस्य ऋक्सामान्यप्सरस-
एष्टयो नाम ताभ्यः स्वाहा” । इदमृक्सामेभ्योऽप्सरोभ्य एष्टिभ्यो न
मम ॥ १२ ॥

इति राष्ट्रभृद्घोमः ।

जयहोमः^१

“ॐ चित्तं च स्वाहा” । इदं चित्ताय न मम ॥ १ ॥
 “ॐ चित्तिश्च स्वाहा” । इदं चित्त्यै न मम ॥ २ ॥
 “ॐ आकूतं च स्वाहा” । इदमाकूताय न मम ॥ ३ ॥
 “ॐ आकूतिश्च स्वाहा” । इदमाकूत्यै न मम ॥ ४ ॥
 “ॐ विज्ञातं च स्वाहा” । इदं विज्ञाताय न मम ॥ ५ ॥
 “ॐ विज्ञातिश्च स्वाहा” । इदं विज्ञात्यै न मम ॥ ६ ॥
 “ॐ मनश्च स्वाहा” । इदं मनसे न मम ॥ ७ ॥
 “ॐ शक्वरीश्च स्वाहा” । इदं शक्वरीष्यो न मम ॥ ८ ॥
 “ॐ दर्शश्च स्वाहा” । इदं दर्शाय न मम ॥ ९ ॥
 “ॐ पौर्णमासं च स्वाहा” । इदं पौर्णमासाय न मम ॥ १० ॥
 “ॐ बृहच्च स्वाहा” । इदं बृहते न मम ॥ ११ ॥
 “ॐ रथन्तरं च स्वाहा” । इदं रथन्तराय न मम ॥ १२ ॥
 “ॐ प्रजापतिर्जयानिन्द्राय व्वृणो प्रायच्छदुग्रः पृतनाजयेषु । तस्मै
 विशः समनमन्त सर्वाः सऽउग्रः स इ हव्योबभूव स्वाहा” । इदं प्रजा-
 पतये न मम ॥ १३ ॥

इति जय होमः ।

अथाभ्यातान्^२ होमः

“ॐ अग्निर्भूतानामधिपतिः स माऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्
 क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहृत्या ७५
 स्वाहा” । इदमग्नये भूतानामधितपये न मम ॥ १ ॥

“ॐ इन्द्रो ज्येष्ठानामधिपतिः स माऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्
 क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहृत्या ७५

१ तथा च रेणुः—“चित्तं चित्तमथाकूतमाकूर्ति तदनन्तरम् । विज्ञातं च ततो
विज्ञातिं मनः शक्वरीस्तथा ॥

दर्शं च पौर्णमासं च वृहतं च रथन्तरम् । प्रजापति घृतेनैता जयाख्यास्तु त्रयोदशं” ॥

२ अग्निर्भूतानामित्याद्यादशमन्त्राः अभ्यातान संज्ञकाः अत्र श्रुतिप्रमाणमाह-
‘यदेवां अभ्यातानैमन्त्रैसुरानभ्यातन्वन्’ इति ।

स्वाहा” । इदमिन्द्राय ज्येष्ठानामधिपतये न मम ॥ २ ॥

दक्षिण^१ दिशामें एक पात्र रखकर उसमें त्याग करे—

“ॐ यमः पृथिव्याऽअधिपतिः स माऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहृत्या ७५ स्वाहा” । इदं यमाय पृथिव्या अधिपतये न मम ॥ ३ ॥

पुरोहित—वर और कन्याके प्रणीताके जलसे छींटा देता हुआ यह मन्त्र पढ़े—

“ॐ यथा वाणप्रहाराणां कवचं भवति वारणम् । तद्वैवोपधातानां शान्तिर्भवतु वारणम्” ।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

“ॐ वायुरन्तरिक्षस्याधिपतिः स माऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहृत्या ७५ स्वाहा” । इदं वायवेऽअन्तरिक्षस्याधिपतये न मम ॥ ४ ॥

“ॐ सूर्यो दिवोऽधिपतिः स माऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहृत्या ७५ स्वाहा” । इदं सूर्याय दिवोऽधिपतये न मम ॥ ५ ॥

“ॐ चन्द्रमा नक्षत्राणामधिपतिः स माऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहृत्या ७५ स्वाहा” । इदं चन्द्रमसे नक्षत्राणामधिपतये न मम ॥ ६ ॥

“ॐ बृहस्पतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिः स माऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहृत्या ७५ स्वाहा” । इदं बृहस्पतये ब्रह्मणोऽधिपतये न मम ॥ ७ ॥

१ स्मृतिचन्द्रिकायाम्—“यमाय दक्षिणे त्याग ऐशान्यां रोद्वैव च । दक्षिणान्नेययोमंध्ये पितृत्यागो विधीयते । एष त्यागोऽन्यपात्रे स्यात् प्रोक्षणीष्वन्य एव हि” ॥

२ कर्मकौमुद्याम्—“यमरुद्रपितृणां च मृत्योश्चापि तथैव च । आहुत्यन्ते च कर्तव्यो जलस्पर्शः सदा वृद्धैः” ॥

“यमरुद्रपितृकालाः कूरा मृत्युश्च पञ्चमः ।

होमे तच्छान्ति सिद्धयर्थं प्रणीतोदकेन स्पृशेत्” ॥

“ॐ मित्रः सत्यानामधिपतिः स मा ऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहृत्या ७३ स्वाहा”। इदं मित्राय सत्यानामधिपतये न भम ॥ ८ ॥

“ॐ वरुणोऽपामधिपतिः स मा ऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहृत्या ७३ स्वाहा”। इदं वरुणायापामधिपतये न भम ॥ ९ ॥

“ॐ समुद्रः स्नोत्यानामधिपतिः स मा ऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहृत्या ७३ स्वाहा”। इदं समुद्राय स्नोत्यानामधिपतये न भम ॥ १० ॥

“ॐ अन्नर्ठं० साग्राज्यानामधिपति तन्माऽत्ववस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहृत्या ७३ स्वाहा”। इदमन्नाय साग्राज्यानामधिपतये न भम ॥ ११ ॥

“ॐ सोमऽओषधीनामधिपतिः स मा ऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहृत्या ७३ स्वाहा”। इदं सोमाय औषधीनां पतये न भम ॥ १२ ॥

“ॐ सविता प्रसवानामधिपतिः स मा ऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यां देवहृत्या ७३ स्वाहा”। इदं सवित्रे प्रसवानामधिपतये न भम ॥ १३ ॥

ईशान दिशामें एक पात्र रख कर उसमें त्याग करे—“ॐ रुद्रः पशूनामधिपतिः स मा ऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहृत्या ७३ स्वाहा”। इदं रुद्राय पशूनामधिपतये न भम ॥ १४ ॥

पुरोहित—वर और कन्याके प्रणीताके जल का छोटा देवे—“ॐ यथा वाण प्रहाराणामित्यादि” बोले ।

“ॐ त्वष्टारूपाणामधिपतिः स मा ऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहृत्या ७३ स्वाहा”। इदं त्वष्टे रूपाणामधिपतये न भम ॥ १५ ॥

“३० विष्णु पर्वतानामधिपतिः स माऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्या ७१ स्वाहा”। इदं विष्णवे पर्वतानामधिपतये न भम ॥ १६ ॥

“३१ मरुतो गणानामधिपतयस्ते माऽवन्त्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रे स्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्या ७२ स्वाहा”। इदं मरुदभ्यो गणानामधिपतिभ्यो न भम ॥ १७ ॥

दक्षिण और अग्नि कोणके बीचमें एक पात्र रखकर उसमें त्याग करे—

“३२ पितरः पितामहाः परेऽवरे ततास्ततामहाः। इह माऽवन्त्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्या ७३ स्वाहा”। इदं पितृभ्यः पितामहेभ्यः परेभ्योऽवरेभ्यस्ततेभ्यस्ततामहेभ्यश्च न भम ॥ १८ ॥

पुरोहित—वर कन्याके प्रणीताके जलका छोटा देवे ।

“३३ यथा वाण प्रहाराणामित्यादि” बोले ।

इत्यभ्यातान होमः ।

पञ्चाहुतयः^१

“३४ अग्निरै तु प्रथमो देवताना ७४ सोऽस्यै प्रजां मुञ्चनु मृत्युपाशात् । तदय ठं० राजा व्वरुणोऽनुमन्यतां यथेय ७५ स्त्री पौत्रमधं न रोदात् स्वाहा”। इदमग्नये न भम ॥ १ ॥

“३५ इमामग्निस्त्रायतां गार्हपत्यः प्रजामस्यै नयतु दीर्घमायुः । अशून्योपस्था जीवतामस्तु माता पौत्रमानन्दमभिविबुद्ध्यतामिय ७६ स्वाहा”। इदमग्नये न भम ॥ २ ॥

“३६ स्वस्ति नोऽअग्ने दिवऽआ पृथिव्या विश्वानि धेह्य यथा यजत्र । यदस्यां महि दिवि जातं प्रशस्तं तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्र ७७ स्वाहा”। इदमग्नये न भम ॥ ३ ॥

१ “आहुति त्रितयं दद्याद्विवाहे साक्षिकाग्नये । साक्षिदानादि पूज्योऽग्नेऽग्निं साक्षिणमाहुनेत्” ॥

“ॐ सुगन्ध पन्थां प्रदिशन्नऽहि ज्योतिष्मद्वेद्यजरन्नऽ आयुः ।
अपैतु मृत्युरमृतंमऽआगाद्वैवस्वतो नोऽ अभयं कृणोतु स्वाहा” । इदं
वैवस्वताय न मम ॥ ४ ॥

पुरोहित-वर कन्या और अग्निके बीचमें अन्तः^१ पट (वस्त्र) देकर चुपचाप अग्निमें “परं मृत्यो” इस मन्त्र से आहृति देवे ।

तत्र मन्त्रः—“ॐ परं मृत्योऽनु परेहि पन्थां यस्तेऽन्यऽइतरो
देवयानात् । चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजा ७३ रीरिखो मोत
व्वीरान्त्स्वाहा” । इदं मृत्यवे न मम ॥ ५ ॥

पुरोहित—अन्तः पट दूर करके वर कन्याके प्रणीताके जलका
छींटा देवे ।

(इसी समय वर पक्षीय और कन्या पक्षीय पुरोहित क्रमसे मङ्गला-
ष्टक या शाखोच्चारण करे ।)

(यहाँ मरुदेशीय प्रथानुसार चँचरी रोपण करे ।)

लाज होमः

वधूको आगे कर वधू और वर पूर्वाभिमुख^२ खड़े होवें
(संस्कारदोपक तथा गोभिल गृह्यसूत्रमें लिखा है कि वर कन्याके

१ लाजहोमात्पूर्वम् “दरं मृत्यो” इत्यनेन यो होमः क्रियते तस्य फलं मृत्युनिवारणम् ।
कारिकायम्—रोद्रचां पैत्र्यामथो याम्यां मार्तव्यामाहृती तथा । दम्पत्योरल्पमायुः
स्यादन्तर्धिरचना न चेत्” ॥

“मृत्योर्होमं तु यः कुर्यादन्तर्धानं विना नरः । अशुभं जायते तस्य दम्पत्योरल्प-
जीवनम्” ॥ इति वचनात् ।

२ राजमार्तण्डे — “वधूवरी तु प्राक् स्थित्वा संहृत्य स्वकराञ्जलीन् । त्रिभिर्मन्त्रैर्हु-
नेत् लाजान् भ्रातृदत्तान् यथाविधि ॥ धृताभिधारितांश्चैव मिश्रितांश्च शमीदलैः । साङ्घष्ठ-
हस्तं गृह्णीयाद्वरो वध्वा यदा पुनः । अशमन्यारोहयेत् गाथोदगानं कुर्याद्वरस्तथा । वरोऽग्ने
च वधूं कृत्वा वर्ण्णं ब्रह्मादिसंयुतम् ॥ परिक्रमेद्धि प्रयतो द्विवारं तु पुनरस्तथा । विपर्यासनं
स्वं स्वमुपविश्य वधूवरी । पुनरुत्थाय च स्थित्वा पूर्ववद्वोमहेतुवे । भ्रातृदत्ताञ्जलालाजान
शूर्पंकोणेन वाञ्जली ॥ भगाय स्वाहेत्युक्त्वा तांस्तु वही हुनेतवधूः । वरोऽग्नेच ततो भूत्वा वध्वा
तूष्णीं परिक्रमेत् । प्राजापत्यं ततो हुत्वा उदीच्यां क्रमयेत्तु ताम्” ॥

पृष्ठकी ओर से आकर वधूके दक्षिण की ओर 'उत्तराभिमुख स्थित होकर दक्षिण हाथ से वधूकी अञ्जलिको ग्रहण कर)

हथलेवा खोलकर वरकी अञ्जलिमें कन्याकी अञ्जलिको रखावे । फिर कन्याका भाई वृत्तलगे शमीपत्र (जांटीके पत्ते) और लाजा (खोल) को शूर्पमें धाल दे फिर उन खीलोंके चार भाग करे और फिर उनमें से एक एक भागको अलग अलग अपनी अञ्जलिसे कन्याकी अञ्जलिमें गेरे और कन्या 'मन्त्र पढ़ती हुई उस लाजा को अग्निमें तीन बार आहुति देवे ।

(अर्यमणमिति मन्त्रस्य अर्थवर्ण ऋषिरग्निर्देवताऽनुष्टुप्छन्दो
लाजहोमे विनियोगः)

तत्र मन्त्रः—“ॐ अर्यमणं देवं कन्याऽग्निमयक्षत । स नोऽ-
अर्यमा देवः प्रेतो मुञ्चतु मा पतेः स्वाहा” । इदमर्याण्डे न यम ॥ १ ॥

“ॐ इयं नार्युपब्रूते लाजानावपन्तिका । आयुष्मानस्तु मे पति-
रेधन्तां ज्ञातयो मम स्वाहा” । इदमग्नये न यम ॥ २ ॥

“ॐ इमाँलाजानावपाम्यग्नौ समृद्धिकरणं तव । मम तुभ्यं च
संवननं तदग्निरनुमन्यतामिय १३३ स्वाहा” । इदमग्नये न यम ॥ ३ ॥
इति अञ्जलिस्थान् सर्वान् लाजान् जुहोति ।

वर कन्याके दाहिने हाथको अंगूठे^३ सहित पकड़े और ये मन्त्र पढ़े । हथलेवा फिर बन्धवा देवे ।

“ॐ गृणामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथाऽऽसः ।
भगोऽर्यमा सविता पुरन्धिर्मह्यं त्वा दुर्गर्हिपत्याय देवाः । अमोऽह-
मस्मि सा त्व १३० सा त्वमस्यमोऽहम् । सामाहमस्मि ऋक् त्वं द्यौरहं

१ “अनुपृष्ठं पतिः परिकम्य दक्षिणत उद्ढमुखोऽवतिष्ठते वधवञ्जलि गृहीत्वा” ॥
(गो० गृह्यसूत्रे ।)

२ वधूपठनीया मंत्राः—कारिकायाम्—“लाजहोमे मन्त्रत्रयं सूर्यस्यावेक्षणं सङ्कृतं ।
भगाय चैकमंत्रं च कन्या पठति पञ्चमम् । ध्रुवदर्शनकाले च षष्ठश्चैव उदाहृतः ॥”

३ रेणुः—“साङ्गुष्ठं हस्तमुतानं गृह्णात्यस्याः पतिस्ततः । गृणामि ते सौभग-
त्वायेति मन्त्रेण दक्षिणम्” ॥

पृथिवी त्वम् । तावेहि विवाहवहै सह रेतो दधावहै । प्रजां प्रजनयावहै पुत्रान् विन्द्यावहै बहून् । ते सन्तु जरदष्टयः सम्प्रियौ रोचिष्णु सुमनस्यमानौ । पश्येम शारदः शतं जीवेम शारदः शत ठं० शृणुयाम शरदः शतमिति” ।

फिर वर अग्निके उत्तर रक्खे हुये ^१पत्थर पर वधूका दाहिना चरण धरे । (^२वायां चरण भूलकर भी न धरे)

वर यह मन्त्र पढ़े—“ॐ आरोहे ममशमानमश्मेव त्व १३ स्थिरा भव । अभितिष्ठ पृतन्यतोऽवाधस्व पृतनायतः” ।

पत्थर पर स्थित हुई कन्याके वर गाथा गान करे—

“३५ सरस्वति प्रेदमव सुभगे व्वाजिनीवति । यां त्वा विश्वस्य भूतस्य प्रजायामस्याग्रतः । यस्यां भूत ठं० समभवद्यस्यां विश्वमिदं जगत् । तामद्य गाथां गास्यामि या स्त्रीणामुत्तमं यशः” ।

फिर वधू आगे^३ और वर पीछे हो प्रणीता ^४ब्रह्मसहित अग्नि की प्रदक्षिणा करें । गणपत्यादि देवता और कलश अन्यत्र रख कर प्रदक्षिणा करे ।

वर मन्त्र पढ़े—“ॐ तुभ्यमग्रे पर्यवहन्त्सूर्या वहतु ना सह । पुनः पतिभ्यो जायां दाऽने प्रजया सह” ।

इसके बाद अग्निके पश्चिमकी ओर ठहर कर लाजहोम, पाणिग्रहण, अश्मारोहण, गाथागान, अग्निप्रदक्षिणा, ये सब कर्म दो बार

१ गृह्यकारिकायाम्—“गत्वोभावुत्तरेणान्निं तस्याः सव्येतरं करम् । सव्येनादाय हस्तेन वधूपादन्तु दक्षिणम् । शिलामारोहयेत्प्रागायतां दक्षिणपाणिना” ॥

२ स्मृतौ—“वरस्तु सव्यहस्तेन वधूपादं च दक्षिणम् । शिलामारोहयेत्प्राज्ञो मन्त्रोच्चारणपूर्वकम् ॥ शक्तिरूपा शिला प्रोक्ता शिवरूपः शिलापतिः । तत्राङ्गुठद्वयस्पशर्ति कन्या तु विधवा भवेत्” ॥

३ सं० भास्करे—“अग्रेतु शुभदा पत्नी माङ्गल्ये सर्वकर्मणि । पदेपदेऽश्वमेघांच धनायुः पुत्रवर्धनम् ॥”

“कामस्त्वमोघवाणीषः प्रहरेदतिदारणः । तस्मादग्रे भवेत्कन्या सर्वदोषोपशान्तये ॥ कन्यकाज्ञे वरं कृत्वा ब्राह्मणो ज्ञानदुर्बलः ॥ विधवा जायते नारी निषेधस्तत्र कारणम्” ॥

४ गदाधरस्तुः प्रणितासहितमेव अग्नि प्रदक्षिणं कुर्याताम्, इति अभिमन्यते युक्तिप्रमाणं चापि दर्शयति ।

और पुरोहित करावे । तीन बार परिक्रमण (फेरा) करने के बाद कन्याका भाई शूर्प (छाज) के कोण से कन्या की अञ्जलिमें खील डाले और कन्या उन लाजाओंको मन्त्र पढ़ती हुई ॐ अञ्जलिसे अग्नि में डाले । तत्र मन्त्रः—“ॐ भगाय स्वाहा” इदं भगाय न मम ॥

फिर ॐ आगे वर पीछे वधू होय ॐ चुपचाप चौथा परिक्रमण करें । गणपत्यादि देवता कलश यथास्थान स्थापन करके प्रदक्षिणा करें । वर यथास्थान बैठ ब्रह्मासे अन्वारब्ध कर घृतकी आहुति देवे । हृतशेष घृत का प्रोक्षणीपात्रमें प्रक्षेप करे ।

“ॐ प्रजापतये स्वाहा” । इदं प्रजापतये न मम ॥

अत्र प्रोक्षणी पात्रे हृतशेषाज्यप्रक्षेपणं ।

लोकैव्यवहारसे मामा सेवरा देवे ।

—तथा च तद्भाव्यं—“वधूवरौ अग्ने: प्रदक्षिणं कुर्वन्तौ अन्तरं गत्वा तन्मध्य एव गच्छेतामिति” । तथा च कारिकायाम् —

“दम्पत्योर्गच्छतोस्तत्र ब्रह्माग्नी अन्तरा गतिः” इति ।

परे तु ब्रह्मसहिताग्नेः प्रदक्षिणायामपि—“वरोऽग्रे च वधूं कृत्वा वर्त्ति ब्रह्मादि-संयुतम् । परिक्रमेद्वि प्रयतो द्विवारं तु पुनस्तथा” ॥

इति राजमार्तण्डीय वचनस्य प्रमाणत्वादुभावपि पन्थानौ शास्त्रसम्मतौ । अतश्च स्व स्वदेशाचारानुकूलमनुष्ठेयन् ।

१ शोनकः—“हृतावशिष्टाल्लाजांस्तु वधूः स्वाभिमुखं ततः । शूर्पग्रेणैव जुहुयात्तूष्णीं निरवशेषतः” ॥

सं० ग०—“अग्रेच विधवा नारी कोणेचैव विपत्तयः । न चाग्रेण न कोणेन जुहुया-च्छूर्पकुष्ठयोः” ॥ शूर्पकुष्ठया अञ्जलावावपेदित्यर्थः । तान् कुमारी—“भगाय स्वाहा” इत्यनेन मन्त्रेण जुहोति ॥

२ “वरोऽग्रे च ततो भूत्वा वधवास्तूष्णीं परिक्रमेत् । प्राजापत्यं ततो हृत्वा उदीच्यां क्रमयेत् ताम्” ॥

३ कारिकायाम्—“हस्तग्रहणतस्तूष्णीं भवेदत्र परिक्रमः” ।

४ देवलः—“यस्मिन्देशे पुरे ग्रामे त्रैविद्यनगरेऽपि वा । यो यत्र विहितो धर्मसंतं धर्म न विचारयेत्” ॥

“यस्मिन् देशे य आचारो न्यायदृष्टस्तु कल्पितः । तस्मिन्नेव स कर्तव्यो देशाचारः स्मृतो भूतो” ॥

यदाहापस्तम्बः—“येषां परम्पराप्राप्ताः

पूर्वजैरप्यनुष्ठिताः । त एव तैर्न दुष्येयुराचारैर्नेतरैः पुनः” ॥

चँचरी उठाकर यथास्थान रखवावें ।

यहाँ लोकाचारसे अन्तः पट देवे—

“स्थानं प्रधानं न बलं प्रधानं स्थाने स्थितः कापुरुषोऽपि धीरः ।
जानामि नागेन्द्र ! तब प्रभावं कण्ठं विना गर्जसि शंकरस्य ॥ १ ॥

गर्जेयदा तृणवच्छेदनीयो दृष्ट्वा ब्रह्मा देवतानां च मुख्यः । वैरं
मध्ये वैनतेयाहिराजं तयोरन्तः पट्टमादत्त नूनम्” ॥ २ ॥

इति गौरी शंकरयोर्विवाहे गरुडनागयोः कलहं दृष्ट्वा ब्रह्मा तयो-
रन्तः पटं कारितवान् ।

“मण्डपे ^१मधुपकं च लाजहोमे तथैव च । यावत्कन्या न वामाङ्गे
तावत्कन्या कुमारिका” ॥ १ ॥

पुरोहित वधूवरका हस्तविमोचन (हथलेवा छुटाकर) कराकर
कन्यापिता स्वदक्षिण हाथमें हिरण्यादि दक्षिणा लेकर संकल्प करे—

—“अद्य विवाहकर्मणि हस्त विमोचन साङ्गतासिद्धचर्यमिदं
सुवर्णाङ्गुलीयकं (तन्मूल्योपकल्पितं द्रव्यं वा) अमुकगोत्राय अमुक-
शर्मणे वराय दक्षिणात्वेन तुभ्यमहं सम्प्रददे” ।

वरके हाथमें दक्षिणा देवे ।

वर कहे—“३० स्वस्ति” ।

उत्तरसे उत्तरकी ओर सात जगह मेंहदी धरे और उनमें वधूका
दाहिना^२ पैर अनुक्रमसे वर धरावे । वधू उत्तराभिमुख हो सात पैर
चले और वर एक एक पद पर ये मन्त्र पढ़े —

१. “मण्डपे मधुपकं च लाजहोमे तथा कृते । पूर्णापञ्चदशैवांशा न तु सर्वे
नखोन्मिताः ॥ यतो यावद्वधूर्नवं वामपाश्वं वरस्य सा । तावत्कन्यैव सम्प्रोक्ता गुरुभि-
स्तत्त्वदर्शिभिः” ॥

२. “वध्वा दक्षिणपादानि सप्तानि प्रक्रमेत् सा ।

याम्यादुदग्दिक् संस्थाप्य प्रक्रमेदुत्तरोत्तरम्” ॥

तथा च यमः—“नोदकेन न वाचा वा कन्यायाः पतिरुच्यते । पाणिग्रहणसंस्कारा-
त्पतित्वं सप्तमे पदे” ॥ अत्र वरः कन्याया दक्षिणपादं गृहीत्वा सप्तमु स्थानेषु निक्षिपेत्, इत्येव
सूत्रकाराशयः ज्ञायते । एवमेवाश्मारोहणोऽपि । अत्र वध्वा पादस्पर्शं दोषो ना शंकनीयः ।
शास्त्रविहिते कर्मणि दोषसंभावनाया अनीचित्यात् ।

सप्तपदी

“ॐ एकमिथे विष्णुस्त्वा नयतु” ॥ १ ॥ भाषार्थ—विष्णुरूप जो मैं वर हूँ अन्नादिकों की रक्षा के लिये तुङ्ग वधू को प्रथम मण्डल में प्रथम पैर धराता हूँ । तब प्रसन्न हो वधू वर से यह कहे कि—‘धनं धान्यं च मिष्टान्नं व्यञ्जनाद्यं च यदगृहे । मदधीनं च कर्तव्यं वधूराद्ये पदे-ज्ञवीत्’ ॥ १ ॥

भाषार्थ—धन, धान्य, अन्नादि मीठाव्यंजन आदि जो तुम्हारे घर में हैं, वे सब आप मेरे अधीन करदें ताकि मैं उन पदार्थों से सास ननद श्वसुर आदि कुटुम्ब की यथार्थ सेवा कर सकूँ ।

फिर वर कहता है कि—

“ॐ द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वा नयतु” ॥ २ ॥

भाषार्थ—विष्णुरूप जो मैं वर हूँ (ऊर्जे) बल के लिये (द्वे) दूसरे मण्डल में दूसरा पैर चलने को प्राप्त करता हूँ ।

फिर वधू वर से दूसरी प्रार्थना यह करती है कि—

“कुटुम्बं प्रथयिष्यामि ते सदा मञ्जुभाषिणी । दुःखे धीरा सुखे हृष्टा द्वितीये साऽन्नवीद्वरम्” ॥ २ ॥

भाषार्थ—मैं तुम्हारे कुटुम्ब को पुष्ट करती हुई पालन करूँगी, सदा मीठे वचन बोलने वाली रहूँगी, कभी कटु वचन नहीं बोलूँगी यदि कोई दुःख आन पड़े तो उसमें धीरज धारण करके रहूँगी अर्थात् आपके सुख में सुखी दुःख में दुःखी रहूँगी, यह सुन के वर फिर कहता है—

“ॐ त्रीणि रायस्पोषाय विष्णुस्त्वा नयतु” ॥ ३ ॥

भाषार्थ—विष्णुरूप जो मैं वर हूँ (रायस्पोषाय) धनकी बढ़ो तरी के लिए तीसरे मण्डल में तीसरा पैर धरा कर प्राप्त करता हूँ ।

फिर वधू वर से तीसरी प्रार्थना करती है कि—

“ऋतौ काले शुचिः स्नाता क्रीडयामि त्वया सह । नाऽहं परपर्ति यायां तृतीयं साऽन्नवीद्वरम्” ॥ ३ ॥

भाषार्थ—ऋतु (रजस्त्वला) हो लेने के बाद शुद्ध स्नान करके मैं

आपके ही साथ में आनन्द क्रीड़ा करूँगी पराये पति को मनसे भी नहीं ग्रहण करूँगी । वर फिर कहता है कि—

“ॐ चत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वा नयतु” ॥ ४ ॥

भाषार्थ—विष्णुरूप मैं जो वर हूँ (मायोभवाय) सुखकी उत्पत्ति के लिए चौथे मण्डल में चौथे पैर के चलने में तुक्षको प्राप्त करता हूँ । फिर वधू वर से चौथी प्रार्थना यह करती है कि—

“लालयामि च केशान्तं गन्धमाल्यानुलेपनैः । काञ्चनैर्भूषणैस्तुभ्यं तुरीये साऽब्रवीद्वरम् ॥ ४ ॥

भाषार्थ—चौथे मण्डल में पैर रखते ही वधू वर से कहती है कि जो सिन्दूर, रोली, फूलों आदि से सोलह शृङ्खार या इतर चन्दनादिकों से सुवासित होकर कपड़े सोने के भूषणों से जो मेरे अंग की सुन्दरता होगी, वह आपके ही प्रसन्न करने या लाड़ लड़ाने को होगी, वधू की इस चौथी प्रार्थना को सुन के वर फिर कहता है कि—

“ॐ पञ्च पशुभ्यो विष्णुस्त्वा नयतु” ॥ ५ ॥

भाषार्थ—विष्णुरूप मैं जो वर हूँ पशुओं के सुख के लिए पांचवें मण्डल में पांचवें पैर के चलने में तुक्षको प्राप्त करता हूँ । भाव यह है कि मेरे सम्पूर्ण पशुओं की मालिकनी भी तू ही रही । इस तरह अपने आनंद को प्रकट करती हुई वधू वर से पाँचवीं प्रार्थना करती है—

“सखीपरिवृता नित्यं गौर्याराधनतत्परा । त्वयि भक्ता भविष्यामि पञ्चमे साऽब्रवीद्वरम्” ॥ ५ ॥

भाषार्थ—पाँचवें पैर के धरने में आनन्दित होकर वधू यह प्रार्थना करती है कि मैं आपकी मङ्गल कामना के लिए अपनी सखियों के सहित गौरी की आराधना में तत्पर रहती हुई आप मैं ही भक्ति भाव करती रहूँगी । यह सुनके वर फिर कहता है—

“ॐ षड् ऋतुभ्यो विष्णुस्त्वा नयतु” ॥ ६ ॥

भाषार्थ—विष्णुरूप मैं जो वर हूँ ^१छहों ऋतुओं के सुख के लिए

^१ “हिमशिशिरवसन्त ग्रीष्मवर्षाशरत्सु च । स्तनतपनवनाम्भोहर्ष्यंगोक्षीरपानैः । सुखमनुभव राजन् ! शत्रवो यान्तु नाशं दिवसकमल लज्जाशर्वंरो रेणुपकैः” ॥

ऋतु-ऋतु के अनुसार जुदे-जुदे सुखों के लिए तेरे को छठे मण्डल में पैर धरने को प्राप्त करता हूँ। फिर वधू वर से प्रार्थना करती है—

“यज्ञे होमे च दानादौ भवेयं तव वामतः । यत्र त्वं तत्र तिष्ठामि पदे षष्ठेऽन्नवीद्वरम्” ॥ ६ ॥

भाषार्थ—यज्ञ, होम, दानादिकों के देने में आप जहाँ रहोगे वहीं मैं आपकी सेवा में स्थित होऊँगी। छठे पैर के धरने पर वर वधू से यह कहता है कि—

“ॐ सखे सप्तपदा भव सा मामनुव्रता भव विष्णुस्त्वा नयतु”
॥ ७ ॥

भाषार्थ—हे सखे ! विष्णुरूप मैं जो वर हूँ आपसे यह कहता हूँ कि यहाँ (भूर्भुवः स्वः महः जनः तपः सत्यः) इन सात लोकों में मेरे साथ मेरी आज्ञा में होकर पतिव्रता धर्म शीलसे सुन्दर कीर्ति वाली हो और मेरे अनुकूल हो एवं पातिव्रत शील से उत्पन्न हुए धर्मके अनुकूल रहती हुई तू सात लोकों में विख्यात होगी। इस प्रकार वर से आनन्दित हुई वधू वर से सातवाँ वचन यह कहती है कि—

“सर्वेऽत्र साक्षिणस्त्वं हि मम भर्तृत्वमागतः । कृतेन ब्रह्मणा पूर्वं विधानेन कुलोत्तम !” ॥ ७ ॥

भाषार्थ—हे कुलोत्तम ! यहाँ सम्पूर्ण सभ्यजनों की साक्षी के होते हुए पहली ब्रह्मा की बनाई वेद विधि से आप मेरे भर्ता यानी पति हो चुके, अब मेरे आनन्द की कोई सीमा नहीं है।

दक्षिणमें स्थित दृढ़पुरुषके कन्धेसे जलका लोटा लेकर आमके पत्ते से या दुर्वा की प्रोक्षणी से जल लेकर वर वधू के शिर पर ‘अभिषेचन

१ “गत्वा पादानि सप्ताथ संयोज्य शिरसी च ते । कुम्भस्य सलिलं सिञ्चेदुभयोः शिरसोः स्वयम् । सौभाग्यजननी देवीं स्मृत्वा दाक्षायणीं शिवाम्” ॥

इत्याश्वलायनाचार्येण चोभयोः शिरस्यभिवेकस्य विधानाद्वारः स्वयं कलशस्थ सलिलेन स्वमपि सिञ्चेत् ।

न चात्र—“अभिषेके पत्नी वामतः” इति शास्त्रतः पत्न्या वामे अवस्थानं शक्यम् । पत्न्याः संस्कार्यत्वात्, “अभिषेके पत्नी वामतः” इति सामान्यशास्त्रस्य—“दक्षिणतः परि भार्या-पविशति” इति विशेष शास्त्रेण बाधात् सामान्य शास्त्रस्य चतुर्थीकर्मान्तरं भार्यास्त्रिद्वयो, अन्यत्र अभिषेककर्मणि “अभिषेके पत्नी वामतः” इति सामान्यशास्त्रस्य चारिताथांति ।

(छोटे) करे ।

उसी प्रकार अपनी आत्माका भी वर अभिषेचन करे ।

वर ये मन्त्र पढ़े —

“ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कृष्णन्तु
भेषजम् ॥ १ ॥

“ॐ आपो हिष्ठा मयोभुवस्तानङ्गजे दधातन । महेरणाय चक्षसे
॥ २ ॥

“ॐ यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयते ह नः । उशतीरिव
मातरः ॥ ३ ॥

ॐ तस्माऽअरङ्गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ । आपो जनयथा
च नः” ॥ ४ ॥

दिवाविवाहपक्षे

वर वधू से कहे कि सूर्य को देख और वधू सूर्य को देखती हुई मन्त्र
पढ़े—

“ॐ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येभ शरदः शतं
जीवेभ शरदः शत ठ० शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः
स्याम शरदः शतम्भूयश्च शरदः शतात्” ॥

यदि सूर्यास्त हो जाये तो ध्रुव देखने के लिये वर वधू से कहे—
“ध्रुवमुदीक्षस्व”^१ ध्रुव का दर्शन कर । तदनन्तर वधू ध्रुव का दर्शन करे
और वर मन्त्र पाठ करे—

“ॐ ध्रुवमसि ध्रुवं त्वा पश्यामि ध्रुवैधि पोष्ये मयि । मह्यं त्वा-
ऽऽदाद वृहस्पतिर्मया पत्या प्रजावती सञ्जीव शरदः शतम्” ।

यदि उस समय ध्रुव न दीखे तो भी कहे—“पश्यामि”^२

वर वधू के दाहिने कन्धे पर हाथ रख वधू के हृदय को स्पर्श करता

^१ स्मृतिसंग्रहे—“सूर्यविलोकनादायुरभिवृद्धिमंवेदध्रुवा” ॥

तथा च रेणुः—“ध्रुवं पश्येति तां ब्रूयादित्यवो च त्रिविक्रमः” ।

^२ “सा यदि न पश्येत्पश्यामीत्येव ब्रूयात्” इति सूत्रम् ।

हुआ यह कहे—

“अँ मम व्रते ते हृदयं दधामि मम चित्तमनुचितं तेऽस्तु । मम वाचमेकमना जुषस्व प्रजापतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्यम्” ।

अत्र समाचारात्कन्या सप्ताभीष्टानि वाक्यानि निवेदयति ।

कन्या भाषते

“तीर्थव्रतोद्यापनदानयज्ञान् यथा सह त्वं यदि कान्त कुर्याः । वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं भाषेत वाक्यं प्रथमं कुमारी” ॥ १ ॥

भाषार्थ—कन्या कहती है कि मेरे साथ यदि आप तीर्थ, व्रत, उद्यापन,दान, यज्ञ आदि करो तो मैं आपके वामाङ्ग में आऊं, यह प्रथम वाक्य कुमारी बोले ।

“हृव्यप्रदानैरभरान् पितॄङ्गच कव्यप्रदानैर्यदि पूजयेथाः । वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं भाषेत कन्या वचनं द्वितीयम्” ॥ २ ॥

भाषार्थ—आप यदि हृव्य प्रदान (हृवनीय द्रव्य) कर देवताओंको, कव्य प्रदान (श्राद्धीय द्रव्य) कर पितरों को पूजन कर प्रसन्न करो तो मैं आपके वामाङ्ग में आऊं, यह कन्या द्वितीय वाक्य बोले ।

“कुटुम्बरक्षाभरणे यदि त्वं कुर्याः पशूनां परिपालनं च । वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं भाषेत कन्या वचनं तृतीयम्” ॥ ३ ॥

भाषार्थ—आप यदि कुटुम्ब की रक्षा पालन करें और पशुओं का पालन करें तो मैं आपके वामाङ्ग में आऊं, यह कन्या तीसरा वाक्य बोले ।

“आयव्ययौ धान्यधनादिकानां दृष्ट्वा गृहे चेदुचितं निदध्याः । वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं भाषेत कन्या वचनं चतुर्थम्” ॥ ४ ॥

भाषार्थ—आप धान्यधनादिकों का आय व्यय देख कर घर में उचित व्यवस्था करो तो मैं आपके वामाङ्गमें आऊं, यह कन्या चतुर्थ वाक्य बोले ।

“देवालयारामतडागकूपवापीर्विदध्या अथ पूजयेथाः । वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं भाषेत कन्या वचनं च पञ्चमम्” ॥ ५ ॥

भाषार्थ—आप यदि मन्दिर, बगीचा, तालाब, कूप (कूआ), बावड़ी बनाओ और उनकी प्रतिष्ठा कराओ तो मैं आपके वामाङ्ग में आऊं, यह कन्या पांचवां वाक्य बोले ।

“देशान्तरे वा स्वपुरान्तरे वा यदि प्रकुर्याः क्रयविक्रयौ त्वम् । वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं भाषेत कन्या वचनं च षष्ठम्” ॥ ६ ॥

भाषार्थ—परदेशमें या स्वदेश में आप क्रय-विक्रय करें तो मैं आपके वामाङ्गमें आऊं, यह कन्या छठा वचन बोले—

“न सेवनीया परपूर्विका स्यात् काले त्वया भाविनि भास्मिनीति । वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं भाषेत कन्या वचनं च सप्तमम्” ॥ ७ ॥

भाषार्थ—आप भविष्यमें अत्यन्त प्रबल कामना होने पर भी दूसरे की स्त्रीका सेवन न करें और एक पत्नीव्रत धारण करें तो मैं आपके वामाङ्गमें आऊं, यह कन्या सप्तम वचन बोले ।

वरो ब्रूते

“उद्याने ॑मद्यपस्थाने परगोहे गमनं तथा ।

परपुंसारतिर्गोतं हास्यं वज्यं त्वया सदा ॥ १ ॥

अन्तर्गोहे स्थितानित्यं सुखदुःखानुभोगिनी ।

यदा तिष्ठसि भद्रे ! त्वं पालनीया सदा भम्” ॥ २ ॥

भाषार्थ—आप बगीचे में तथा शराबियोंके स्थानमें अकेली न जाना तथा पर पुरुषके साथ क्रीड़ा करना, गाना, बजाना और हँसना

१. “पानं दुर्जनसंसर्गं: पत्या च विरहोटनम् ।

स्वप्नश्चान्यगृहे वासो नारीणां दूषणानि षट्” ॥

“द्वारोपवेशनं नित्यं गवाक्षेण निरीक्षणम् ।

असत्प्रलापो हास्यं च दूषणं कुलयोषिताम्” ॥

“असत्यं साहसं माया मात्सर्यं चलचित्तता । निर्णुण्ट्वमशौचत्वं स्त्रीणां दोषाः स्वभावजाः ॥

“स्त्रीभिर्भर्तृवचः कार्यमेष धर्मः परः स्त्रियाः ॥”

“गुरुरग्निद्विजातीनां वर्णनां ब्राह्मणो गुरुः । पतिरेको गुरु स्त्रीणां सर्वस्याभ्यागतो गुरुः ॥”

“पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने ।

पुत्रश्च स्थाविरे भावे न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति” ॥

आदि तुङ्गे सर्वदा छोड़ देना चाहिये । वरके भीतर रहती सुख तथा दुःखको भोगती हुई स्थित होगी तो मैं अवश्य तुम्हारा पालन करूँगा ।

“उद्याने सोमपाने च पितुर्गृहगमेऽपिच ।

मदाज्ञां लंघयित्वा तु न गच्छेयदि सुन्दरि” ॥ ३ ॥

भाषार्थ—आप वगीचे तथा शराब पीनेके स्थानमें और अपने पिताके घरमें भी मेरी आज्ञाका उल्लंघन करके यदि न जाओ तो मैं तुम्हारा पालन करूँगा ।

“सदैव सेवां कुरु मे गुरुणां मदीयचित्तानुगताच भूयाः ।

पतिव्रताधर्मपरायणात्वं—गृहस्थकार्यं सकलं कुरुष्व” ॥ ४ ॥

भाषार्थ—सदैव मेरे माता पिताकी सेवा करती हुई मेरे मनके अनुसार तुम चलना । पतिव्रता धर्मका पालन करती हुई सारे ही गृहस्थ कार्योंको सुचारू रूपसे तुम करती रहो तो मैं तुम्हें वामाङ्गमें ले सकता हूँ ।

“मदीय चित्तानुगतं च चित्तं सदा मदाज्ञापरिपालनं च । पति-
व्रताधर्मपरायणा त्वं कुर्याः सदा सर्वमिमं प्रयत्नम्” ॥ ५ ॥

भाषार्थ—मेरे चित्तके अनुगत आपका चित्त हो सदा मेरी आज्ञाका परिपालन करो । पतिव्रत धर्म में परायण हो यह सब प्रयत्न तुम सदा करो ।

यहाँ शिष्टाचारसे वधूको वरके ^१वाम भागमें बैठावे । अनामिकाद्य वधूके शिरपर रख वर अभिमंत्रण करे । पीछे वर अनामिकाप्रसे सिन्दूर ^२ वधूके मस्तक पर डाले और मन्त्र पढ़े—

“ॐ सुमङ्गलीरियं वधूरिमा ७३ समेत पश्यत । सौभाग्यमस्यै दत्वा याथाऽस्तं विपरेत न” ।

१ सं० गणपती—“वामे सिन्दूरदाने च वामे चैव द्विरागमे । वामेऽशनैपश्यताम्याम्या भवेऽजाया प्रियार्थिनी ॥”

२ तथा च रेणुः—“पाणिभ्यां संहताभ्यां च स तामेवाभिमन्त्रयेत् । मुगङ्गली-
रियमिति मन्त्रेणार्थं वरस्त्रियः । पतिपुत्रान्विता भव्याश्वतसः सुभगा अपि । सौभाग्यमस्यै
दद्युस्ता मङ्गलाचारपूर्वकम्” ॥

“आचारात्स्त्रियः सिन्दूरादीनि कुर्वन्ति ।” गदाधर भाष्ये तत्त्ववार्यक्रमेच ।

वर ब्रह्माका अन्वारब्ध कर—

“ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा” । इदमग्नये स्विष्टकृते न मम ।

संल्लवप्राशन कर आचमन करे पूर्णपात्र दक्षिणा सहित ब्रह्माको देवे ।

वर स्वदक्षिणहस्तमें पूर्णपात्र लेकर संकल्प करे—

“ॐ अद्य कृतस्य विवाह होमकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थमिदंपूर्णपात्रं प्रजापतिदैवतं सदक्षिणाकममुकगोत्राय अमुक शर्मणे ब्राह्मणाय दक्षिणात्वेन तुभ्यमहं सम्प्रददे” ।

ब्रह्मा कहे—“ॐ स्वति” ।

आचार्यको सुवर्णादि दक्षिणा देवे ।

यजमान स्वदक्षिण हस्तमें यथाशक्ति दक्षिणा लेकर संकल्प करे—

“अद्य कृतैतद्विवाह होमकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं १गोप्रत्याम्नायी-भूतमिदं द्रव्यममुकगोत्राय अमुकशर्मणे आचार्याय तुभ्यमहं सम्प्रददे” ।

आचार्य कहे—“ॐ स्वस्ति” ।

ऐसे ही होता ऋत्विगादिकोंको भी यथाशक्ति दक्षिणा देवे ।

ततो ब्रह्मग्रन्थ^३ विमोक्तः ।

पुरोहित प्रणीताके जलसे वधूवर और दाताके शिर पर जलके छोटे देवे और पवित्रीको ^३अग्निमें छोड़ दे । यह मन्त्र पढ़े—

“ॐ सुमित्रियानऽआपऽओषधयः सन्तु” ।

ईशान दिशामें प्रणीता उलटा देवे । यह मन्त्र पढ़े—

तत्रमन्त्रः—“ॐ दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मोन्देष्टि यं च वयं द्विष्मः” ।

आस्तरण क्रमसे कुशाओंको उठाकर घृतमें भिगोय कर हाथसे आहृति देवे ।

१ “गौब्रह्मणस्य वरो ग्रामो राजन्यस्याश्वो वैश्यस्य ।” (पार० ग० १-७-९)

२ ब्रह्मणोऽमावपक्षे कौशो ब्रह्मा कार्य इति हरिहर लेखनात् कुण्डसमुदाये ब्रह्मग्रन्थं कृत्वैव ब्रह्मस्थाने कुशा स्थापनीयाः । कर्मसमाप्तौ तस्यैव ग्रन्थेविमोक्तः कर्तव्य इत्याशयम्

३ बौ० ग० —“विस्त्रंस्य पवित्रेऽद्विः संस्पृश्याग्नावनु प्रहरति” ॥

तत्रमन्त्रः—“ॐ देवा गातु विदो गातुं वित्वा गातु मित । मन-
सस्पतऽइमं देव यज्ञे हु० स्वाहा व्वाते धाः स्वाहा” ।

(नात्र॑पूर्णहुतिहोमः प्रमाणाभावात् ।)

ऋग्युषं करणम्

ईशान दिशासे सुवसे भस्मी लेकर दक्षिणहस्त की अनामिका-
यभागसे लगावे—

“ॐ ऋग्युषं जमदग्नेः” इति ललाटे ।

“ॐ कश्यपस्य ऋग्युषम्” इति ग्रीवायाम् ।

“ॐ यद्वेषु ऋग्युषम्” । इति दक्षिणबाहुमूले ।

“ॐ तत्त्वोऽस्तु ऋग्युषम्” इति हृदि ।

इसी क्रमसे बधूके भी ऋग्युष करे ।

भूयस्या॒ दक्षिणायाः सङ्कल्पः

वर और यजमान अपने-अपने दक्षिण हाथमें जलाक्षत द्रव्य
लेकर संकल्प करें—

“अद्य कृतैतद्विवाहकर्मणः साङ्गतासिद्धचर्थं तन्मध्ये न्यूनातिरि-
क्तदोषपरिहारपूर्वक शुभफलप्राप्त्यर्थमिमां भूयसीं दक्षिणां नानाना-

१ विवाहादिसंस्कारेषु पूर्णहुतिं न दद्यात् पारस्करगृह्यसूत्रादावनुकृत्वात्—
“विवाहादि क्रियायां च शालायां वास्तुपूजने । नित्यहोमोपसर्गे च पूर्णहुतिं न कारयेत् ॥”

ग०० ३० ग०० सूत्रे च — “विवाहे व्रतवन्धे च शालायां चौरकर्मणि । गर्भाधानादिसंस्कारे
पूर्णहुतिं न कारयेत् ।”

मात्स्येऽपि—“शतान्ते वा सहस्रान्ते सम्पूर्णहुतिरिष्यते । उत्तिष्ठन्मासा व्यात्वा
वह्निमाज्यफलेन च ॥”

इतिवचनाच्छत्तसहस्रसंख्याऽहुतिविशिष्टेषु कर्मसु अन्ते पूर्णहुतिर्लंभ्यते न तु न्यन-
संख्याहुतिविशिष्टं होमेष्विति ।

२ प्रयोगदीपिकायां विशिष्टः—“ऐशान्या आहरेऽद्वस्म सुचा वाऽथ सुवेण वा । अंकनं
कारयेत्तेन शिरः कण्ठांसहस्र्तु च । कश्यपस्येति मन्त्रेण यथाऽनुक्रम योगतः ॥”

३ “वरोऽपि भूयसीं दद्याद् ब्राह्मणेभ्यो विशेषतः । ऋचां च पाठकेभ्यश्च द्विगुणं
दक्षिणा भवेत् ॥”

अत्र ब्राह्मणेभ्यो विशेषत इत्युक्त्या तदतिरिक्तानां दीनान्धकृपणानामपि भूयसी
दक्षिणादानभव्याहृतम् ।

मगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दीनाथेभ्यो नटनर्तकगायकेभ्यश्च विभज्य दातु-
महमुत्सृज्ये” ।

यहाँ लोकाचारसे पुरोहित वधूवरके तिलककर ^१आरता करे
और वरके पिता आदि गोद भरें ।

आचार्यादिकोंको दक्षिणा देकर भूयसी दक्षिणा ब्राह्मणोंको देवे ।

कन्यापिता स्वदक्षिणहस्तमें चावल लेकर आवाहित देवताओं का
विसर्जन करे—

“३५ यान्तु देवगणाः सर्वे विना लक्ष्मी विनायकौ ।

(पूजामादाय मासिकाम्)

इष्टकाम समृद्धयर्थं पुनरागमनाय च ।

कर्मपूर्तिकामोऽविष्णुस्मरेत् ।

३५ विष्णवे नमः” । तीन बार बोले ।

फिर वर वधू स्त्रियोंके सभीप देवी देवताओं के (थाप) आगे
जावें ।

१ “ग्रामवचनं च कुर्यादिवाह शमशानयो” रिति सूत्रम् । विवाहे शमशाने च वृद्धानां
स्त्रीणां वचनं वाक्यं कुर्युः । सूत्रे अनुपनिवद्धमपि वधूवरयोर्वस्त्रयोर्ग्रन्थिवन्धनम्, कन्याया
हरिद्रिया हस्तलेपनम्, वधूवरयोर्हस्तयोरलक्षकगुटिका धारणम्, चैवरी रोपणम्, वधूवरयो
र्नीराजनं (आरतो) वध्वा गोदभारणमादि ताश्च यत्स्मरन्ति तदपि कर्तव्यम् । च शब्दा-
देशाचारोऽपि —

तथा चाश्वलायन :—“अथ घृतच्छावचा जनपदधर्मा ग्रामधर्मच्च तान्विवाहे
प्रतीयात् यत् मानं तद्व्याप्तम् इति” ।

उच्चावच धर्मानाह शौनक :—“नानाविधा जनपदा ग्राम्याश्चोद्वाहकर्मणि क्रियम्ते
लौकिका धर्मस्तेषु तत्कुलपूरुषैः । पुर्वेनुष्ठितान् छत्वा कुर्याद्वारपरिग्रहम्” ॥

ग्रामशब्देन स्वकुलवृद्धास्त्रियोऽधिधीयन्ते । ता हि पूर्वपूरुषरनुष्ठीयमानंसदाचारं
स्मरन्ति ।

ग्रामवचनं लोकवचनमिति भर्तृयजः ।

वृद्धाणां स्त्रीणां वचनं कार्यम् ।

—“ग्रामं प्राविशतादिति वचनात्तस्मात्तयोर्ग्रामः प्रमाणमिति श्रुतेः ।

विधान पारिजातेऽपि—“कारयन्ति स्त्रियो वृद्धा यत्कर्तव्यमिहैव तत् । प्रमाण-
वचनं तासां वचनाच्च श्रुतेरिह” ॥

२ “विष्णवपितानि कर्मणि साक्षाति भवन्ति हि ।

अर्नपितानि कर्मणि भस्मनीव हुतं हविः” ॥

वरवधूस्त्रिरात्रनियमः

विवाहके दिनसे लेकर तीन रात्रि^१ क्षार तथा लवण पदार्थोंको नहीं भक्षण करना चाहिये और विवाहके दिनसे लेकर संवत्सर (एक वर्ष) अथवा बारह रात्रि अथवा षट् रात्रि अथवा तीन रात्रितक ब्रह्मचारी रहें। इन दिनोंमें भूमिपर कम्बलादि विछाकर शयन करें।

इति विवाहकर्मपद्धतिः ।

३ चतुर्थीकर्म

विवाह दिनसे चौथे दिन की रात्रि के अन्तिम प्रहर में अपने घर

१ “गोक्षीरं गोघृतं चैव धार्यं मुद्गातिला यवाः ।

अक्षारलवणा होते क्षारश्चान्ये प्रकीर्तिताः” ॥

तथा च सत्यवतः—“विवाहे दम्पती स्यातां त्रिरात्रं ब्रह्मचारिणौ ।

अथः शय्यासिनौ स्यातामक्षारलवणाशिनौ” ॥

२ चतुर्थीकर्मप्रयोजनमप्याह मार्कण्डेयः—

“चतुरशीति दोषाणि कन्यादेहे तु यानि वै ।

प्रायशिच्चत्करं तेषां चतुर्थी कर्म ह्याचरेत्” ॥

तथा च हारीतः—रात्रौ चतुर्थी कुरुते सा कन्या सुखदा सदा ।

धनधार्यं वृद्धिकरी पुत्रपौत्रसमृद्धिदा” ॥

चतुर्थी कर्मादिकरणे अनिष्टमपि स्मरन्ति —

‘यदा न कुरुते कर्म चतुर्थीत्रितमादितः ।

इह जन्मनि वन्ध्या स्यात् वैधव्यं जायते पुनः ॥”

इति शास्त्रप्रामाण्याच्चतुर्थीकर्मण आवश्यकत्वं प्रतीयते । अधुना च ये कर्मां आलस्यवशादिदं कर्म न कारयन्ति, ते वधूवरयोर्महदनिष्टं सम्पादयन्तास्तथावध्वा भार्यासिन्ना मनुत्पादयन्तः विवाह कर्मणोऽङ्गवैकल्यं जनयन्ति । चतुर्थीकर्मतः प्राक् तस्या भार्यात्वा भावाद्विवाहैकदेशत्वाच्चतुर्थीकर्मणः—तथा चोक्तं नित्यानुरागिष्याम् ।

“अप्रदानाद् भवेत्कन्या प्रदानानन्तरं वधूः ।

पाणिग्रहे तु पत्नी स्याद् भार्या चातुर्थी कर्मणि” ॥

इति सुधीभिराकलनीम् ।

विवाह दिनाच्चतुर्थीमिपररात्रौ इदं कर्म अवश्यमनुष्ठेयम् । तत्र करणाशक्तौ विवाहानन्तरं तस्मिन्नेवाऽग्नी तस्यामेव रात्रौ चतुर्थी कर्म सम्पादनीयम् ।

तथा चोक्तं संस्कार गणपते—“मुख्यकाले यदाऽवश्यं कर्तुं न शक्यते । गोण-कालेऽपि कर्तव्यं गौणोऽप्यत्रेदूशो भवेत् । काललोपो यदि भवेत् कर्मलोपं न कारयेत्” ॥

तथा चोक्तं—‘तमेवाग्निसुप्तसमाधाय’ इति सुत्राच्च प्राप्नोत्येवेति । *

में वर वधू के साथ मङ्गलस्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर अच्छे आसन पर बैठकर अपने दक्षिण में वधू को बैठाकर आचमन प्राणायाम करे और स्वदक्षिण हस्त में जलाक्षत द्रव्य लेकर संकल्प करे—

“ममास्या वध्वा: पत्न्या: सोमगन्धर्वाऽग्न्युपभुक्तत्वदोषपरिहार द्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं विवाहाङ्गभूतं चतुर्थीकर्महं करिष्ये ।”

गणेश-मातृका-नवग्रहादि पूजन कर, तुष, केश शर्करादि रहित वेदी में पञ्चभूसंस्कार करके १ “शिखिनाभक्” अग्नि स्थापन कर दक्षिण में ब्रह्मास्थापन करके प्रणीतापात्र स्थापित कर स्थालीपाकचरु श्रपण कर पहले की तरह कुशकण्डिका करे । फिर दक्षिण जानु को नीचे कर कुशा से ब्रह्माका अन्वारब्ध कर वर प्रज्वलित अग्निमें सुखसे घी की आहुति देवे । हुतशेषाज्यको प्रोक्षणीपात्रमें छोड़े ।

“३० प्रजापतये स्वाहा” इदं प्रजापतये न यम १ इति यनसा ।

“३० इन्द्राय स्वाहा” इदमिन्द्राय न यम २ इत्याघारौ३ ।

“३० अग्नये स्वाहा” । इदमग्नये न यम ॥ ३ ॥

“३० सोमाय स्वाहा” । इदं सोमाय न यम ॥ ४ ॥ ३ इत्याज्य-भागौ जुहुयात् ।

वर अन्वारब्ध के बिना घी की आहुति देवे—और जलपात्र में संत्रब प्रक्षेप करे—

१ “चतुर्थी कर्मणि शिखी धृतिरग्निस्तथा परे” ।

२ “आघारी नासिके ज्येयावाज्यभागी च चक्षुपी । वक्त्रोदरं च कुक्षिश्च कटिवर्ण-हृतयः स्मृताः । शिरो हस्ती च पादी च पञ्च वारुणकं स्मृतम् । प्राज्यापत्यं स्विष्टकृच्च श्रोत्रे द्वे च प्रकीर्तिं” ॥

“पूर्वाधारौ नैऋतात् कोणादीशानकोणगः ।

होतव्यो वायुकोणात् वह्निकोणान्तमुत्तरः” ॥

३ “आग्नेयमुत्तरपूर्वाद्विं वह्निकोणान्तमुत्तरः” ॥

आग्नेयमुत्तर पूर्वाद्विं आग्नेयमाज्यभागकम् ।

सौम्यं दक्षिणपूर्वाद्विं सुसमिद्देऽथवा पुनः” ॥

*अत्र कुशकण्डिकां विनापि कर्मकर्तुं शक्यते—“पशुः समानतन्त्रः स्यादिति वीधायनोऽब्रवीत्” । इति वीधायनेन प्रायशिच्चत पशोरग्नीयोमीयपशु समानतन्त्र बोधनात् माध्यन्दिनादिभिः सर्वैरपि तत्पक्षस्य स्वीकारात् । अत्रापि कुशकण्डिकां विनैव विवाहे होमेन समानतन्त्रता स्वीकारात् ।

“ॐ अग्ने प्रायशिचत्ते त्वं देवानां प्रायशिचत्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा
नाथकामऽउपधावामि याऽस्यै पतिघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा”
॥ १ ॥

इदमग्नये न मम । (जल पात्रमें संख्व प्रक्षेप करे)

“ॐ वायो प्रायशिचत्ते त्वं देवानां प्रायशिचत्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा
नाथकामऽउपधावामि याऽस्यै प्रजाघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय
स्वाहा” ॥ २ ॥

इदं वायवे न मम । (उदपात्रे संख्वप्रक्षेपः ।)

“ॐ सूर्यं प्रायशिचत्ते त्वं देवानां प्रायशिचत्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा
नाथकामऽउपधावामि याऽस्यै पशुघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा”
॥ ३ ॥

इदं सूर्याय न मम । (उदपात्रे संख्वप्रक्षेपः ।)

“ॐ चन्द्रं प्रायशिचत्ते त्वं देवानां प्रायशिचत्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा
नाथकामऽ उपधावामि याऽस्यै गृहघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय
स्वाहा” ॥ ४ ॥ इदं चन्द्राय न मम । (उदपात्रे संख्व प्रक्षेपः ।)

“ॐ गन्धर्वं प्रायशिचत्ते त्वं देवानां प्रायशिचत्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा
नाथकामऽउपधावामि याऽस्यै यशोघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा”
॥ ५ ॥ इदं गन्धर्वाय न मम । (उदपात्रे संख्व प्रक्षेपः ।)

वर स्थालीपाकमें धी मिला स्तुव से लेकर प्रजापतिका मनसे ध्यान
कर आहुति देवे—

“ॐ प्रजापतये स्वाहा” इदं प्रजापतये न मम । (उदपात्रे
संख्व प्रक्षेपः ।)

आज्य और चरु (खीर) एक साथ लेकर अन्वारब्ध करके स्विष्ट-
कृत हवन करे—

“ॐ अग्नये 'स्विष्टकृते स्वाहा' इदमग्नये स्विष्टकृते न मम ।

१ “आज्यभिन्नं यदा होम द्रव्यं स्याद्विधिवोधितम् ।

महाव्याहृतिहोमात्राक् तदा स्विष्टकृदाचरेत् ॥

ततो व्याहृति होमादि सर्वं होमं समापयेत् ।

आज्यमेव यदा होमद्रव्यं स्याद्विधिवोधितम् ।

तदा सकलहोमाते स्विष्टकृदोममाचरेत्” ॥

नवाज्याहुतय

“ॐ भूः स्वाहा” इदमग्नये न मम ॥ १ ॥

“ॐ भुवः स्वाहा” इदं वायवे न मम ॥ २ ॥

“ॐ स्वः स्वाहा” इदं सूर्याय न मम ॥ ३ ॥

“ॐ त्वन्नोऽअग्ने व्वरुणस्य विद्वान्देवस्य हेडोऽअवयासिसीष्ठाः।
यजिष्ठो व्वहितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषा १५ सि प्रमुमुग्ध्यस्म-
त्स्वाहा” ॥ ४ ॥

इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ।

“ॐ स त्वन्नोऽअग्ने भवोती नेदिष्ठोऽअस्याऽउपसो व्युष्टौ ।
अवयक्ष्व नो व्वरुण ठं० रराणो व्वीहि मृडीक ठं० सुहवोनऽएधि
स्वाहा” ॥ ५ ॥

इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ।

“ॐ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्वमयाऽअसि । अया-
नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषज १६ स्वाहा” ॥ ६ ॥

इदमग्नये अयसे न मम ।

“ॐ ये ते शतं व्वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा विवतता महान्तः ।
तेभिर्न्नोऽअद्य सवितोत विष्णुव्विष्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वकर्मा-
स्वाहा” ॥ ७ ॥

इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्धृत्य स्वकर्मा-
भ्यश्च न मम ।

“ॐ उदुत्तमं व्वरुणपाशमस्मदवाधमं विमध्यम १७ शथाय ।
अथा व्ववमादित्य व्वते तवा नागसोऽअदितये स्याम स्वाहा” ॥ ८ ॥

इदं वरुणायादित्यायादितये न मम ।

“ॐ प्रजापतये स्वाहा” ॥ ९ ॥ इदं प्रजापतये न मम । तत्
संखव प्राशनम् । पवित्राभ्यां भार्जनम् । अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिः ।

ब्रह्मा के लिये पूर्णपात्र देवे—

“अस्यां रात्रौ कृतस्यास्य चतुर्थीकर्मज्ञं होमकर्मणः साङ्गत-

सिद्धर्थमिदं पूर्णपात्रं सदक्षिणाकममुकगोत्राय अमुकशर्मणे ब्राह्मणाय
ब्रह्मणे तुभ्यमहं सम्प्रददे” ॥

“ॐ स्वस्ति ।” ब्रह्मग्रन्थविमोक्षः ।

पुरोहित-प्रणीता के जल से वर वधू के शिर पर मार्जन कर
अग्निमें पवित्री छोड़ दे—

“ॐ सुमित्रियानऽआपऽओषधयः सन्तु” । “ॐ दुर्मित्रियास्त-
स्मै सन्तु योऽस्मान्देष्ट यं च वयं द्विष्मः” ।

ईशान दिशामें प्रणीता उलट दें । तदा बहिर्होमः ।

वर आम के पत्रों से पूर्वस्थापित जलपात्र से जल लेकर वधू के
मस्तक पर “यातेपतिघ्नी” इस मन्त्र से प्रोक्षण करे—

तत्रमन्त्रः— “ॐ या ते पतिघ्नी प्रजाघ्नी पशुघ्नी गृहघ्नी
यशोघ्नी निन्दितातन् जारघ्नीं ततऽएनांकरोमि सा जीर्यं त्वं मया
सह श्री अमुकिदेवि” ।

वर वधूको हृतशेष स्थालीपाक^१ (खीर) खिलावे और मन्त्र पढ़े—

“ॐ प्राणैस्ते प्राणान्त्सन्दधामि । अस्थिभिस्ते अस्थीनि सन्द-
धामि । मा १३३ सैस्ते मा १३३ सानि सन्दधामि । त्वचा ते त्वचं सन्द-
धामि ।” इति मन्त्रेण ।

वर वधू के दाहिने कन्धेपर हाथ रख उसके हृदय का स्पर्श करता
हुआ मन्त्र पढ़े—

“ॐ यत्ते सुसीमे हृदयं दिवि चन्द्रमसि श्रितम् । वेदाहं तन्मां
तद्विद्यात् पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत ठ० शृणुयाम शरदः
शतमिति” । ततस्त्रयायुषकरणम् ।

^१ अत्र केचित् स्थालीपाकमालस्यान्न कुर्वन्ति, तेऽपि मोदकादीन् वधूं भोजयेयः वधू
संस्कारोऽयं न तु द्रव्यप्रतिपत्तिः, अतो द्रव्यस्य नाशदोषादावन्यद्रव्येण प्राशनं कार्यम्—

तथा च रेणुः—वधू संस्कार एवायं प्रतिपत्तिरियं न तु । ततो द्रव्यविनाशादौ द्रव्येणा-
न्येन तद् भवेत् । शेषद्रव्यविनाशादौ लुप्यन्ते प्रतिपत्तयः” ॥

अतो द्रव्यस्य नाशदोषादौ अन्यत् मोदकलाजादिकं वरोवधूं भोजयेत् ।

ब्राह्मणभोजनसंख्यमाह यज्ञपाशवे—

—“गभीरानादि संस्कारे ब्राह्मणान् भोजयेदेश । शतं विवाह संस्कारे पञ्चाशन्मेष-
लाविधी । आवस्थये त्रयोर्विशच्छ्रोताधाने शतात्परम् । अष्टकं भोजयेत् त्रीन्वातत्तसंस्कार-
सिद्धये” इति ।

आचार्यादिकों को दक्षिणा देकर ब्राह्मणोंको भी भूयसी दक्षिणा देवे और उनसे आशीर्वाद ग्रहण करे ।

इति चतुर्थीकर्मप्रयोगः ।

“इति श्रीराजस्थानराज्यान्तर्गत श्रीरत्नदुर्गनिवासिना, गौड़-वंशावत्सेन, वशिष्ठगोत्रोद्भवेन, शिवालोपाह्नेन, पण्डित श्रीकस्तूरी चन्द्रपौत्रेण, श्रीचतुर्थीलालात्मजेन, श्रीगङ्गाधर शर्मणा तामङ्गायतेन विरचिता विपुलटिष्पण्या भाषाटीकया सहिता विवाहपद्धतिः समाप्ता” ।

साङ्कल्पिक^१ नान्दीश्राद्धम्

तत्रादौ कर्ता अपने आसन पर यज्ञोपवीती ^२उद्दमुख बैठ, चार

१ सांकल्पिक नान्दीश्राद्धस्वरूपमाह हेमाद्री सम्बर्त :-

—“समग्रं यस्तु शक्नोति कर्तुं नैवेह पार्वणम् । अपि संकल्पविधिना तस्मिन्काले विधीयते ॥ पात्रे भोज्यस्य चान्नस्य त्यागः संकल्प उच्यते । तत्प्रयुक्तो विधिर्यस्य स तेन व्यपदिश्यते । तावन्मात्रेण संबद्धं श्राद्धं संकल्पमुच्यते” ॥

पिण्डहीनः श्राद्धशब्दः संकल्पश्राद्धपर्यायः । नान्दीश्राद्धं त्रिविधम्

—विवाहादि नियन्तेभित्तिकं, पुत्रजन्माद्यनियतनिभित्तमन्याधानादि नियितं चेति, तत्र विवाहादि नियितं प्रातः कार्यम् । तदाह शातातपः—“प्रातर्वृद्धिनियितकम्” ।

अत्र प्रातः शब्दः सार्वप्रहरात्मकाल वचनः ।

तदाह गार्यः—“ललाट सम्मिते भानी प्रथमः प्रहरः स्मृतः । स एव सार्वसंयुक्तः प्रातरित्यभिधीयते” ॥

अन्याधाननियितं त्वपराह्ने कार्यम् —

तदाह गालवः—“पार्वणं चापराह्ने तु वृद्धिश्राद्धं तथाग्निकम्” इति ।

अन्याधाननियितं वृद्धिश्राद्धमपराह्ने कुर्यादित्यर्थः । पुत्रजन्मादी नियितानन्तरमेव तत्कार्यम् ।

तथा च शातातपः—पूर्वाह्ने मातृकं श्राद्धं मध्याह्ने पैतृकं तथा । ततो मातामहानां च वृद्धिश्राद्धं त्रयं स्मृतम्” ॥

अस्याप्यसंभवे — आह वृद्धमनुः—“अलाभे श्राद्धकालानां नान्दीश्राद्धत्रयं वृधः । पूर्वेद्युरेव कुर्वीत पूर्वाह्ने मातृपूर्वकम् ॥” इदं च

महत्सु कर्मसु । अल्पेषु तु कर्माह एव श्राद्धम् ।

२ अत्र कर्तुर्दिङ नियमोऽभिहित आश्वलायन गृह्णपरिशिष्टे सं० गणपतौ च—

—“आभ्युदयिके युग्मा ब्राह्मणा अमूला दर्भः प्राडमुखेभ्य उद्दमुखो दद्या-

पलाशके पत्तों पर दक्षिणोत्तरक्रमसे प्रागग्र चार १कुशबटु निर्माण कर स्थापित करे ।

फिर कर्मसौकर्यर्थि कर्मपात्र जलसे पूर्णकर दूर्वा, दधि, गन्ध, पुष्प, यव गेरकर आचमन प्राणायाम कर विष्णुका स्मरण करे । “ॐ श्राद्धकाले गयां ध्यात्वा ध्यात्वा देवं गदाधरम् । मनसा च पितृ-न्ध्यात्वा नान्दी श्राद्धं समारभेत्” ॥

कर्मपात्रजल से श्राद्धीय द्रव्योंका ओक्षण करे—

“ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थाङ्गतोऽपि वा । यः स्मरे-त्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याऽभ्यन्तरः शुचिः” ॥ १ ॥

ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु ३ । तीन बार बोले । कर्ता स्वदक्षिणहस्तमें दूर्वा, यव जल द्रव्यादि लेकर देशकालका संकीर्तन करे—

“मम स्वकीय पुत्रविवाहे (स्वकीय कन्या विवाहे) सम्भाव्य-मान जननाशौचपातकादि निरसनपूर्वक विवाहकर्मणः साङ्गतासि-द्विद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं सांकलिपकविधिना ब्राह्मणयुग्मभोजन-पर्याप्तान्न निष्क्रयीभूत यथाशक्ति हिरण्येन नान्दीश्राद्धं करिष्ये ।”

तदङ्गत्वेनादौनिर्विघ्नतार्थं गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं भातूका-पूजनं वसोद्धरापूजनं दिग्क्षणं रक्षाबन्धनं च करिष्ये ।”

इस प्रकार संकल्प कर गणपति ३मातृका पूजनादि पहले की तरह कर नान्दी श्राद्ध करे ।

* दुदडमुखेभ्यो वा प्राडमुखो द्वी दर्भो पवित्रे ।” अत्र प्राडमुखेभ्य उदडमुखो दद्यादित्युदडमुखता नियमः । उदडमुखेभ्यो वा प्राडमुख इत्यनेन प्राडमुखत्वोदडमुखत्वयोर्विकल्प उक्तः ।

अतएव हैमाद्रौ भार्कण्ड्ये पुराणे—“उदडमुख प्राडमुखो वा यजमानः समाहितः । वृद्धिश्राद्धं प्रकुर्वीत नान्यवक्त्रः कदाचन” इति ।

सं० दीपके—“प्राडमुखेषूदडमुखो दद्यादुदडमुखेभ्यः प्राडमुखो वा इत्येव श्रुतिः ।

१ यज्ञादौ क्रियमाणनान्दीश्राद्धे मङ्गलकर्मदौ क्रियमाणे कुशास्थाने दूर्वा एव

—“कुशस्थाने तु दूर्वाःस्युर्मङ्गलस्थायिवृद्धये ।” इति संस्कार भास्करीय वचनात् ।

—“कुशबटूनां मुखकल्पना च अग्रेण कार्येति रुद्रकल्पद्रुमे ।

२ “श्रीलक्ष्मीश्च धृतिमध्याः पुष्टिः श्रद्धा सरस्वती ॥

माङ्गल्येषु प्रपूज्यन्ते सप्ततीता धृतमातरः” ॥

३ विष्णुपुराणे—“अङ्गत्वा मातृयां तु वैदिकं यः समाचरेत् । तस्य क्रोध समायुक्ता हिसामिच्छन्ति मातरः । यत्र यत्र भवेच्छाद्धं तत्र तत्र च मातरः” ॥

पाद्यादिदानम्

कर्ता ताञ्चपात्र में दूर्वा यव जल लेकर प्रथम चट पर पाद्य देवे—

“ॐ सत्यवसुसंज्ञका विश्वेदेवा नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः
इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः”
॥ १ ॥ “अमुकगोत्रा० मातृपितामहीप्रपितामह्या नान्दीमुख्याः ॐ
भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं स्वाहा सम्पद्यतां
वृद्धिः” । इति द्वितीय चटे पाद्यं दद्यात् ।

“अमुकगोत्राः पितृपितामहप्रपितामहा नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः
स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः” ।
इति तृतीयचटे पाद्यं दद्यात् ।

“द्वितीयगोत्रा मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपलीका
नान्दीमुखाः—ॐ भूर्भुवः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं स्वाहा:
सम्पद्यतां वृद्धिः” । इति चतुर्थचटे पाद्यं दद्यात् ।

अथासनदानम्

“सत्यवसुसंज्ञकानां विश्वेषां देवानां नान्दीमुखानां ॐ भूर्भुवः
स्वः इदमासनं सुखासनं स्वाहा नमः सम्पद्यतां वृद्धिः । नान्दीश्राद्वे
क्षणौ क्रियेताम् । ॐ तथा प्राप्नुतां भवन्तौ प्राप्नुवावः” ॥ १ ॥

कुशत्रयरूप यव सहित आसन दक्षिण से आरंभ कर छोड़े । इसी
प्रकार उत्तर से उत्तर की ओर—

“अमुकगोत्राणां मातृपितामहीप्रपितामहीनां नान्दीमुखीनां ॐ
भूर्भुवः स्वः इदमासनं सुखासनं स्वाहा नमः सम्पद्यतां वृद्धिः । नान्दी-
श्राद्वे क्षणौ क्रियेताम् ॐ तथा प्राप्नुतां भवन्तौ प्राप्नुयावः” ॥ २ ॥

“अमुकगोत्राणां पितृपितामहप्रपितामहानां नान्दीमुखानां ॐ

१ अत्र संकल्पादौ विशेषः संग्रहेः— “शुभाय प्रथमान्तेन वृद्धौ संकल्पमाचरेत्
न षष्ठ्यच्चा यदि वा कुर्यान्महादोषोऽभिजायते” ।

भूर्भुवः स्वः इदमासनं सुखासनं स्वाहा ॥ नमः सम्पद्यतां वृद्धिः नान्दी-
श्राद्धे क्षणौ क्रियेताम् । ॐ तथा प्राप्नुतां भवन्तौ प्राप्नुवावः ॥ ३ ॥

द्वितीयगोत्राणां मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहानां सप्तली-
कानां नान्दीमुखानां “ॐ भूर्भुवः स्व इदमासनं सुखासनं स्वाहा नमः
सम्पद्यतां वृद्धिः । नान्दीश्राद्धे क्षणौ क्रियेताम् । ॐ तथा प्राप्नुतां
भवन्तौ प्राप्नुवावः ॥ ४ ॥

गन्धादिदानम्

कर्ता गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, ताम्बूल, यज्ञोपवीत और वस्त्र (धोती
गोच्छा) आसन पर धरे—

“ॐ सत्यवसुसंज्ञकेभ्यो विश्वेभ्योदेवेभ्यो नान्दीमुखेभ्य इदं
गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः ॥ १ ॥

१ परिशिष्टे ईश्वर :—“कुर्यात्स्वाहा स्वधा स्थाने वाचने प्रीयतामिति ।
वृद्धिश्राद्धे सर्वत्र नमो मे वृद्धिरिष्यते” ॥

पुराणसमुच्चयेच —“न स्वधा शर्मं वर्मेति पितृनाम न चोच्चरेत् । न कर्म पितृतीर्थेन
न कुशा द्विगुणीकृताः ॥ न तिलैनपिसव्येन पित्र्यमन्त्रविवर्जितम् । अस्मच्छब्दं न कुर्वीत श्राद्धे
नान्दीमुखे क्वचित् ।” अत्र—“पितृनाम न चोच्चरेत्” “अस्मच्छब्दं न कुर्वीत ।” इति
शाखान्तरं विषयं, स्वशाखायां न स्वधां प्रयुक्तीतेति स्वधा शब्दमात्र निषेधस्योपलम्भात् ।

मदनरत्ने-दानखंडे टोडरमिश्रपद्मतौ च आभ्युदयिकश्राद्धे सर्वत्र गोत्र शर्मं शब्द-
नाम्नामुच्चारणं लिखितम् । सम्बन्धाद्युच्चारणे क्रमनियमाह हेमाद्रौ भृगुः—

“गोत्रसम्बन्धं नामानि पितृकर्मणि कीर्तयेत् ।”

तत्रैव व्यास :—“गोत्रसंबंधं नामानि पितृणामनुकीर्तयन् । एकैकस्य तु विप्रस्य
अर्धपात्रं विनिक्षिपेत् । याज्ञवल्क्योऽपि—“गोत्रनामस्वधाकारैस्तर्पयेदनुपूर्वशः ।

अन्यादृशक्रमः शाखान्तर विषयः । माध्यंदिनादीतां याज्ञवल्क्योऽक्षतक्रमस्यंवो पादातु
मुचितत्वात् तस्य च तेषां गुरुत्वादिति संस्कारदीपये ।

तथा च हेमाद्रौ शातातप :—“कर्तव्यं चाभ्युदयिकं श्राद्धमभ्युदयार्थिना । सव्येन
चोपवीतेन ऋजुदर्भेश्वर धीमता । पितृणां रूपमाल्याय देवाभ्यन्नं समश्नुते ॥ तस्मात्सव्येन
दातव्यं वृद्धिश्राद्धे तु नित्यशः । यथेवोपचरेद्वांस्तथा वृद्धौ पितृनपि ।”

छन्दोगपरिशिष्टे कात्यायनोऽपि—दक्षिणं पातयेज्जानु देवान्परिचयेत्सदा । पातये-
दितरज्जानु पितृन्परिचरन्नपि ॥ निपातो न हि सव्यस्य जानुनो विद्यते क्वचित् । सदा
परिचरेद्वूक्त्या पितृनप्यत्र देववत्” ॥

“अमुकगोत्राभ्यो मातृपितामहीप्रपितामहीभ्यो नान्दीमुखीभ्य
इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः” ॥ २ ॥

अमुकगोत्रेभ्यः पितृपितामहप्रपितामहेभ्यो नान्दीमुखेभ्य इदं
गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः ॥ ३ ॥

“द्वितीयगोत्रेभ्यो मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहेभ्यः सप्तनी-
केभ्यो नान्दीमुखेभ्य इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः” ॥ ४ ॥

ततो भोजननिष्क्रय द्रव्यदानम्

कर्ता दक्षिणहस्तमें हिरण्य जल लेकर—

“ॐ सत्यवसुसंज्ञकेभ्यो विश्वेभ्यो देवेभ्यो नान्दीमुखेभ्यो
ब्राह्मणयुग्मभोजनपर्याप्तमन्नं तन्निष्क्रयीभूतं किञ्चिद्विरण्यं दत्त-
ममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः” ॥ १ ॥

“अमुकगोत्राभ्यो १मातृपितामहीप्रपितामहीभ्यो नान्दीमुखीभ्यो
ब्राह्मणयुग्मभोजनपर्याप्तमन्नं तन्निष्क्रयीभूतं किञ्चिद्विरण्यं दत्तममृत-
रूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः” ॥ २ ॥

अमुकगोत्रेभ्यः पितृपितामहप्रपितामहेभ्यो नान्दीमुखेभ्यो ब्राह्मण-
युग्मभोजनपर्याप्तमन्नं तन्निष्क्रयीभूतं २किञ्चिद्विरण्यं दत्तममृतरूपेण
स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः” ॥ ३ ॥

“द्वितीयगोत्रेभ्यो मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहेभ्यः सप-
त्नीकेभ्यो नान्दीमुखेभ्यो ब्राह्मणयुग्मभोजनपर्याप्तमन्नं तन्निष्क्रयीभूतं
किञ्चिद्विरण्यं दत्तममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः” ॥ ४ ॥

ततः ^३सक्षीरमुदकदानम्

यजमान दुर्घमिश्रित जल दान देवे—

१ छंदोगसूत्र — “माता पितामहीचैव तथैव प्रपितामही । पित्रादयस्त्रयश्चैव
मातुः पित्रादयस्त्रयः । एते नवार्चनीयाः स्युः पित्तरोऽन्युदये द्विजैः इति ।

२ नान्दीश्वादे—अन्नाभावे आनम् । आमाभावे हिरण्यम् । हिरण्याभावे युग्म-
ब्राह्मणभोजनपर्याप्तान्ननिष्क्रयी भूतं यथाशक्ति किञ्चिच्दद्रव्यमिति धर्मसिन्धी ।

३ ब्रह्मपुराणे — “तथाऽक्षयोदकस्थाने दद्यात्क्षीरयवोदकम् ।”

संस्कार गणपती मनुः—“होमकाले तथा दोहे पाके च परिवेषणे । सुरार्चनेऽभिषेके
च ताम्रे गव्यं न दुष्यति ।”

बटीवृशन्मते—“स्नानतर्पण दानेषु ताम्रे गव्यं न दुष्यति । होमकार्ये तथा दोहे
पाके च परिवेषणे” ॥*

सं० ग० “दोहे होमे च पाके च पूजने परिवेषणे । भोजनं वर्जयित्वा च ताम्रे गव्यं न दुष्यति” ॥

“ॐ सत्यवसुसंज्ञकाविश्वेदेवा नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्” ॥ १ ॥

“अमुकगोत्रा मातृपितामहीप्रपितामहो नान्दीमुख्यः प्रीयन्ताम्” ॥ २ ॥

“अमुकगोत्राः पितृपितामहप्रपितामहा नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्” ॥ ३ ॥

द्वितीयगोत्रा मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सप्तनीकान्नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्” ॥ ४ ॥

अथाऽऽशिषो ग्रहणम्

कर्ता साञ्जलि प्रार्थना करे—

यजमान कहे— “गोत्रं तो वर्द्धताम्” ।

ब्राह्मण कहे— “वर्द्धतां वो गोत्रम्”

यज०— “दातारो नोऽभिवर्द्धन्ताम्” ।

ब्राह्मण— अभिवर्द्धन्तां वो दातारः ।

यज०— “वेदाश्च नोऽभिवर्द्धन्ताम्” ।

ब्राह्मण— अभिवर्द्धन्तां वो वेदाः ।

यज०— “सन्ततिर्नोऽभिवर्द्धताम्” ।

ब्राह्मण०— वर्द्धतां वः सन्ततिः ।

यज०— “श्रद्धा च तो माव्यगमत्” ।

ब्राह्मण— माव्यगमद्वः श्रद्धा ।

यज०— “बहुदेयं च नोऽस्तु” ।

ब्राह्मण— अस्तु वो बहुदेयम् ।

यज०— “अन्नं च तो वहु भवेत्” ।

ब्राह्मण— भवतु वो बहुन्नम्

यज०— “अतिथिश्च लभेमहि” ।

ब्राह्मण— लभन्तां वोऽतिथयः ।

यज०— “याचितारश्च नः सन्तु” ।

ब्राह्मण— सन्तु वो याचितारः ।

* ताम्रपात्र निषेधः संपर्हे आचारेन्द्रौ च :- “हस्ते धूतानि पुष्पाणि ताम्रपात्रे च चन्दनम् । गङ्गोदकं चर्मपात्रे निषिद्धं सर्वंकर्मसु” ॥

श्रीराम पट्टले— “ताम्रपात्रे पथः पानमुच्छिष्ठेऽधूतभोजनम् । दुग्धे लवण संयुक्तमेते गोमांस भक्षणम्” ॥

यजमान कहे—“एता आशिषः सत्याः सन्तु ।”

ब्राह्मण कहे—सन्त्वेताः सत्याशिषः ।

दक्षिणादानम्

“ॐ सत्यं वसुसंज्ञकेभ्यो विश्वेभ्यो देवेभ्यो नान्दीमुखेभ्यः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्धर्थं द्राक्षामलक्यवमूलं निष्क्रयी दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये सम्पद्यतां वृद्धिः” ॥ १ ॥

“अमुकगोत्रेभ्यो मातृपितामही प्रपितामहीभ्यो नान्दीमुखीभ्यः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्धर्थं द्राक्षामलक्यवमूलं निष्क्रयी दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये सम्पद्यतां वृद्धिः” ॥ २ ॥

“अमुकगोत्रेभ्यो पितपितामहप्रपितामहेभ्यो नान्दीमुखेभ्यः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्धर्थं द्राक्षामलक्यवमूलं निष्क्रयी दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये सम्पद्यतां वृद्धिः” ॥ ३ ॥

“द्वितीयगोत्रेभ्यो मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहेभ्यः सपत्नी-केभ्यो नान्दीमुखेभ्यः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्धर्थं द्राक्षामलक्यवमूलं निष्क्रयी दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये सम्पद्यतां वृद्धिः” ॥ ४ ॥

यजमान कहे—“नान्दीश्राद्धं सम्पन्नम्” ।

ब्राह्मण कहे—“सुसम्पन्नम्” ।

विसर्जनम्

“ॐ व्वाजे व्वाजेवत व्वाजिनो नो धनेषु विप्राऽअमृताऽकृतज्ञाः । अस्य मध्वः पिवत मादयध्वं तृप्तायात पथिभिर्देवयानैः” ॥ १ ॥

१ “इष्टश्राद्धे क्रतुदक्षी नान्दी सत्यवसु तथा । पुरुचार्द्वी चाऽव्दे तीर्थं तु धूर्लिङ्गनी ॥ कालकामी सपिण्डयां च कुरुकुत्सी महालये । तर्पणे चैव विज्ञेया विश्वेदेवास्त्रयोदश” ॥

२ यथा—ब्रह्मपुराणे—“द्राक्षामलक्यवमूलानि यवांश्चापि निवेदयेत् ॥ तान्येव दक्षिणा चैव दद्याद्विप्रेषु सर्वदा” ॥

३ “मूलमाद्रंकम्” ॥

आमा व्वाजस्य प्रसवो जगम्यादेमे द्यावा पृथिवी व्विश्वरूपे ।
आमागन्ता पितरा मातरा चामा सोमोऽमृतत्वेन गम्यात्” ॥ २ ॥

कर्ता इन दोनों मन्त्रोंसे विसर्जन कर यह कहे—

“अस्मिन्नान्दीश्राद्वे न्यूनातिरिक्तो यो विधिः स उपविष्ट
ब्राह्मणानां वचनात् नान्दीमुखप्रसादाच्च सर्वः परिपूर्णोऽस्तु” ।
ब्राह्मण कहे—“अस्तु परिपूर्णः” ।

इति नान्दीश्राद्वम् ।

मङ्गलाष्टकम्

“श्रीमत्पञ्चजविष्टरो हरिहरौ वायुर्महेन्द्रोऽनलश्चन्द्रो भास्कर-
वित्तपालवरुणाः प्रेताधिपादिग्रहाः । प्रद्युम्नो नलकूवरः सुरगजश्च-
न्तामणिः कौस्तुभः स्वामी शक्तिधरश्च लाङ्गलधरः कुर्वन्तु नो
मङ्गलम्” ॥ १ ॥

“गङ्गा गोमतिगोपतिर्गणपतिगर्विन्द गोवर्धनो गीतागोमय
गौरिजो गिरिसुता गङ्गाधरो गौतमः । गायत्री गरुडो गदाधर
गया गम्भीर गोदावरी गन्धर्वग्रहगोपगोकुलगणाः कुर्वन्तु नो
मङ्गलम्” ॥ २ ॥

“नेत्राणां त्रितयं शिवं पशुपतेरग्नित्रयं पावनं पुण्यं विष्णुपद-
त्रयं त्रिभुवनं ख्यातं च रामत्रयम् । गङ्गावाहपथत्रयं सुविमलं देव-
त्रयं ब्राह्मणं सन्ध्यानां त्रितयं द्विजैः सुविहितं कुर्वन्तु नो मङ्गलम्” ॥ ३ ॥

“गौरी श्रीः कुलदेवता च सुभगा भूमिः प्रपूर्णा शुभा सावित्री
च सरस्वती सुरनदी सत्यव्रतारूप्तती । सत्या जाम्बवती च रुक्म-
भगिनी दुःस्वप्नविध्वंसिनी वेला चाम्बुनिधेः सुमीनमकराः कुर्वन्तु
नो मङ्गलम्” ॥ ४ ॥

“अश्वत्थो वटवृक्षचन्दनतरुमन्दारकल्पद्रुमौ जम्बूनिम्बकदम्बचूत-

१ “विवाहे निष्क्रमे काम्ये द्वयो पूर्तीं समागमे । उत्सवेषु च सर्वेषु प्रशस्तं मङ्गला-
ष्टकम्”

सरला वृक्षाश्च ये क्षीरिणः । सर्वे ते फलसंयुताः प्रतिदिनं विग्राजनं
राजते रम्यं चैत्ररथं च नन्दनवनं कुर्वन्तु नो मङ्गलम् ॥ ५ ॥

“वात्मीकिः सनकः सनन्दनतरुव्यसिसो वशिष्ठो भूगुर्जावालिर्ज-
मदग्निकच्छजनको गर्गार्जिङ्गिरा गौतमः । मान्धाता भरतो नृपश्च
सगरो धन्यो दिलीपो नलः पुण्यो धर्मसुतो यथातिनहुषौ कुर्वन्तु नो
मङ्गलम् ॥ ६ ॥

“लक्ष्मीः कौस्तुभपारिजातकसुरा धन्वतरिश्चन्द्रमा गावः काम-
दुधाः सुरेश्वरगजो रम्भादिदेवाङ्गनाः । अश्वः सप्तमुखः सुधा
हरिधनुः शंखो विषं चाम्बुधे रत्नानीति चतुर्दश प्रतिदिनं कुर्वन्तु
नो मङ्गलम् ॥ ७ ॥

“गङ्गा-सिन्धु-सरस्वती च यमुना गोदावरी नर्मदा कावेरी
सरयू महेन्द्रतनया चर्मण्वती वेदिका । क्षिप्रा वेत्रवती महासुरनदी
रव्याता गया गण्डकी पूर्णाः पूर्णजलैः समुद्रसहिता कुर्वन्तु नो
मङ्गलम् ॥ ८ ॥

“इत्येवं वरमङ्गलाष्टकमिदं पापौघविध्वंसनं पुण्यं सन्मति
कालिदास कविना प्रातः प्रबोधे कृतम् । यः प्रातः शृणुयात्समाहित-
मना दत्वा महादक्षिणां गङ्गासागर सङ्गमोद्भवफलं प्राप्नोति पुण्यं
महत् ॥ ९ ॥

इति मङ्गलाष्टकं समाप्तम् ।

भाषाशाखोच्चारः

“श्रीगणनायक सुमर कर मनमें बारंबार ।

सीता राम विवाह का वरणं शाखोच्चार ॥ १ ॥

पुरा जनक मिथिलेश ने यह प्रण किया कठोर ।

सीता वरणं मैं उसे जो शिव धनु दे तोर ॥ २ ॥

यह प्रण कर भूपालने रचा स्वयंवर फेर ।

भूपोंको न्यौता दिया तनिक करी ना देर ॥ ३ ॥

विश्वामित्र के साथ फिर आये श्रीरघुनाथ ।
 जिनके लक्ष्मणलालजी अनुजग्नात थे साथ ॥ ४ ॥
 और भी आये बहुतसे मिलकर भूप अनेक ।
 खातिर कीनि जनकने कमी रखी ना तेक ॥ ५ ॥
 क्षत्री धनुष उठावते मिलकर बारंबार ।
 पर वह हिलता तक नहीं गये भूप सब हार ॥ ६ ॥
 देख नृपोंकी यह दशा क्रुद्ध भए मिथिलेश ।
 बोले जाना क्षत्री अब रहे न भूपर शेष ॥ ७ ॥
 प्रण करता मैं ना कभी जो यह लेता जान ।
 भूपर भूप रहा नहीं कोई भी बलवान् ॥ ८ ॥
 रामचन्द्र ऊठे तभी सुन यह वचन कठोर ।
 उठा धनुष टंकोर कर भू पर गेरा तोर ॥ ९ ॥
 धनुके टूटत ही भई तहँ पर जयजयकार ।
 तभी सिया ने राम के जयमाला दी ढार ॥ १० ॥
 दशरथ नृपको फिर तभी नौता दिया भिजाय ।
 पुनः सजाकर जान को वे भी पहुँचे आय ॥ ११ ॥
 पुरमें पहुँची जब सुनी शुभ बरात भूपाल ।
 खातिर कीनी बहुतसी सभी हुये खुशहाल ॥ १२ ॥
 घोड़े पर चढ़ कर चले दूल्हा बन रघुनाथ ।
 पीछे जान सुहावनी चारों भाई साथ ॥ १३ ॥
 बहुविधि बाजा बज रहे भेरी ढोल मृदंग ।
 नृत्य करत तहँ अप्सरा सब के चित्त उमंग ॥ १४ ॥
 तोरण चटकी रामने किया आरता फेर ।
 विप्रों को दी दक्षिणा कीनी बहुत बखेर ॥ १५ ॥
 शतानन्द आये तभी वेदी रची अनूप ।
 नारी मंगल गावतीं बैठे सजकर भूप ॥ १६ ॥
 मण्डप रत्नों से जड़ा सुन्दर बन्दनवार ।
 कनक कलश पूरति धरे महिमा वड़ी अपार ॥ १७ ॥

विप्र वेद तहं पढ़त हैं शुद्ध ध्यानके साथ ।
 विष्टर आदिक दे रहे जनक रामके हाथ ॥ १८ ॥
 कियो फेर मिथिलेशने सादर कन्या दान ।
 लियो राम हर्षयिके सुनियो चतुर सुजान ॥ १९ ॥
 दान घनेरा फिर दिया धेनू रत्न अपार ।
 विप्रों को दी दक्षिणा कीनी जय जयकार ॥ २० ॥
 हुआ रामका जिस तरह मिथिला मांहि विवाह ।
 उसी तरह होवे यहाँ सब के मन उत्साह ॥ २१ ॥
 विश्वम्भर को सुमिर कर कीना शाखोच्चार ।
 भूल चूक कवियो मेरी लेना आप सुधार” ॥ २२ ॥

इति नारनौल निवासी हरनारायणकृत भाषा-
 शाखोच्चार समाप्तः ।

द्वितीय शाखोच्चारः

“गजमुख प्रथम मनायके, गुरु पद पंकज ध्याय । सकल सभा
 चितदे सुनो, भाषा रची बनाय ॥ १ ॥ रामचन्द्र सीतापति, राधा
 नन्दकुँवार । सावित्री ब्रह्मापति, रच्यो सकल संसार ॥ २ ॥ कौशल्या
 दशरथ पति, इन्द्राणी इन्द्राज । ईश्वर परणी गौरज्या, दमयन्ती
 नलराज ॥ ३ ॥ वसिष्ठ व्याहि अरुन्धती, अर्जुन द्रौपदि साथ ।
 चन्द्रभार्या रोहिणी, कृष्णसिद्धि गणनाथ ॥ ४ ॥ शंभू पारवती
 पति, लक्ष्मीपति भगवान् । जिन ध्याये आनन्दघणा, सुमिरो सबइ
 सुजान ॥ ५ ॥ नांव जो इतना पत्नीको, सुन्दर पुरुष सुजान । सुन्दर
 देखत सकल मिल, अपने अपने स्थान ॥ ६ ॥ गावत मंगलाचार
 मिल, ध्यावत श्रीगोपाल । जिन ध्याये सुख पाइये, वर कन्या रिछ-
 पाल ॥ ७ ॥ पीछे वरणुं विवाहको, रक्मण भये आनन्द । आये
 कृष्ण वरात ले, बाजैं भेरी मृदङ्ग ॥ ८ ॥ घुरत नगारा ढोल सब,
 मधुर गीत औ चंग । रंग ढोल अति शब्द से, बजे शंख उपशंख ॥ ९ ॥
 गजमाथे श्रीरजत की, नोशत अम्बर झूल । अम्बाड़ी मोतियन जड़ी,

रही फूलसीं फूल ॥ १० ॥ तापै दुलहाँ अति सुधड़ पहने उज्ज्वल
चीर । शीश मुकुट हीरे जड़े, भले बने यदुवीर ॥ ११ ॥ सज्जन
के द्वारे खड़े, मोतियन चौक पुराय । कियो आरतो शुभ घड़ी,
तोरण लियो छुवाय ॥ १२ ॥ सिंहासन बैठे सांवरे, राधा नन्द-
कुँवार । मानु ऊगतो शरद चन्द, सोला कला सेवार ॥ १३ ॥
गणपति की पूजा करी, ब्रह्मा वेद पढन्त । कीन्ही आज्ञा निजनकूं,
ज्ञानवन्त धनवन्त ॥ १४ ॥ तिलक जो कियो ललाट पर, अक्षत
धरे बनाय । दयी दक्षिणा द्विजनकूं, लयी सबी मन भाय ॥ १५ ॥
दे अशीश ब्राह्मण चले, सुखी रहो यजमान । इहैं विधि कन्यादान
दे, भोत कियो सनमान ॥ १६ ॥ करी कृपा हरनाथजी, जादू रची
बनाय । या जोड़ी अविचल सदा, दुलहिन दूलोराय ॥ १७ ॥ इतीक
मेरी उक्ति है, शाखा कही बनाय । ब्रजनन्द सुतकी बीनती, सुन
लीज्यो रघुराय ” ॥ १८ ॥ इति ।

तृतीय शाखोच्चारः

“गणपति गौरी पुत्र को, सुमरुँ बारंबार । देवी विष्णु शम्भु
को सुमरुँ सृष्टिकर्तार ॥ १ ॥ पांच देव को ध्याय के, शाखा कहूँ
बनाय । राधाकृष्णके व्याह की, सुनियो चित्त लगाय ॥ २ ॥ जो
सुनके सुख होयगो, सबहीके मनमार्हि । दुःख मिटें संकट कटें, सकल
पाप मिट जाय ॥ ३ ॥ एक समय वृषभानुजा, मनमें बहुत विचारि ।
वर ढूँढ़न नापित कहीं ढूँड़े कृष्ण मुरारि ॥ ४ ॥ समय देखके व्याहका,
शुभ दिन वार विचार । लग्न लिखायो शुभ घड़ी कीन्हों मंगल त्रार
॥ ५ ॥ लग्न लेय नापित चल्यो, घर दीन्हो वसुदेव । झोरी डारो कृष्ण
की, सब ही कीन्हो नेव ॥ ६ ॥ व्याह दिवस आयो जभी, सज कर चली
बरात । हस्ती घोड़े रथ सजे, मारग नहीं समात ॥ ७ ॥ नर नारी
देखें सभी, मनमें हर्ष उठाय । सो छबि कृष्णबरातकी, हमसे कही
न जाय ॥ ८ ॥ गिरिधारी चौरी चढ़े, पण्डित लिये बुलाय । बहुत

भाँति वेदी रची, मन्त्र पढ़े चित्त लाय ॥ ९ ॥ दुलहन रानी राधिका
वर भये नन्दकुमार । नारी देवें सीठना, हो रहे मङ्गलचार ॥ १० ॥
नारी कहें कृष्ण से, अति अचरजकी बात । कैसे बारी उमरमें, गिरी
उठायो हाथ ॥ ११ ॥ छन्द कहावें कामिनी, वारि वारि दें दान ।
कृष्णचन्द्र मुखसे कहें, नारी करें सन्मान ॥ १२ ॥ श्रीराधा परणा-
यके, विनय करी वृषभान । नन्दराय तुम हो बड़े, मोहि दास कर
मान ॥ १३ ॥ ऐसी विनती करि घनी, दीन्हें दान अदाय । हस्ती
घोड़े रथ सभी, दीन्हें बहुत सजाय ॥ १४ ॥ बहुत दास दासी दिये,
गहिने वस्त्र मन भाय । विरषभानके दान की, गिनती कही न
जाय ॥ १५ ॥ होय विदा घरसे चले, बड़े खुशी नन्दराय । सब
सुन्दर, बाजे, बजें, ध्वजा फिरकती जाय ॥ १६ ॥ शाखा कृष्णके
व्याहकी, सुने जो चित्त लगाय । दुबध्या मन की बीसरे, सकल काम
हो जाय ॥ १७ ॥ इतीक मेरी उक्ति है, शाखा कही बनाय । चिरं-
जीव यह वरवधू, सुनो गोत्र चित्तलाय” ॥ १८ ॥ इति ।

चतुर्थ शाखोच्चारः

जलज सुवन सुतरिपुजनक, तासुतको चित धार । अज सुत
सुतके विवाहको, वरणो शाखोच्चार ॥ १ ॥ अवधपुरी अति पावनी,
सरयू गंगा तीर । भक्तनके सुख देन कु, प्रगटे श्रीरघुवीर ॥ २ ॥
विश्वामित्र महामुनी, जाचे कौशलराज । रघुवर लक्ष्मण संग लिये,
यज्ञ सुधारण काज ॥ ३ ॥ रचो स्वयम्बर जनकजी, करन धनुषको
भंग । कौशिक मिथिला पुर गये, दोनों भाई संग ॥ ४ ॥ खबर
भई तब जनक को, आये विश्वामित्र । वहू प्रकार सनमान करी
आसन दिये विचित्र ॥ ५ ॥ बोले बन्दीजन तभी, सुनो भूप दे कान ।
सो सीताको परणसी, जो तोड़े धनुबान ॥ ६ ॥ तमक उठे तब मूढ़
जन, कुलके देव मनाय । धनुष टरो नहीं धरणि से, बैठे तेज गमाय
॥ ७ ॥ जनक वचन तीखे कहे, लक्ष्मण कीनो कोप । भरी सभा
के बीचमें, प्रण कीनो पग रोप ॥ ८ ॥ गुरु की आज्ञा पायके, तब

उठे रघुबीर । धनुष तोड़ टुकड़ा किया, सूर्यवंश रणधीर ॥ ९ ॥
जनक सुता हरपित भईं, पुष्पमाल लेई हाथ । गल डाली रघुनाथके
सब सखियोंके साथ ॥ १० ॥ परशुराम आये तभी, मनमें क्रोध
अपार । विनय करी अवतार लखि, धनुष वाण दिये डार ॥ ११ ॥
खबर करी अवधेश को, आये जान बनाय । नाना वाहन पालकी,
शोभा कही न जाय ॥ १२ ॥ सामेले जब आईया, जनक सहित
परिवार । तोरण बेग छवाईयां, कामण गावे नार ॥ १३ ॥ गण-
पतिकी पूजा करी, मोतियन चौक पुराय वस्त्र ग्रंथी बन्धन कियो,
सीताको बुलवाय ॥ १४ ॥ हाथलेवो जोड़ो जब, सुर मुनी वेद
पढ़त । ब्रह्मादिक अरु वसिष्ठजी, विधिसे हवन करन्त ॥ १५ ॥
कुलगुरु शाखा पढ़ रहे, हो रही जय जयकार । चारूं भाई परणीया,
जनक राय के द्वार ॥ १६ ॥ हथलेवो छुटचो जब, दीने रतन अपार ।
सीताजी के दान को, को कवि वरणे पार ॥ १७ ॥ दशरथ अति हर्षित
भये, अवधपुरीमें आय । माता कीनो आरतो, सुवरण थाल सजाय
॥ १८ ॥ शहर राजगढ़ गौड़ द्विज, कौशिक गोत्र सुखखान । रूली-
रामकी विनती, सुनयों कृपा निधान ॥ १९ ॥

इति रूलीराम कृत शाखोच्चारणः ।

वंशगोत्रोच्चारणम्

यह कन्यापक्ष का पुरोहित पढ़े—

“श्रीमन्त यशवन्त पुण्यं पवित्रं यजमानसा । रामप्रतापजी
परपौत्रीं वांसलस्य गोत्रीम् ॥ १ ॥ श्रीमन्त यशवन्त पुण्यं पवित्रं
यजमानसा । द्वारकाप्रसादजी परपौत्रीं वांसलस्य गोत्रीम् ॥ २ ॥
श्रीमन्त यशवन्त पुण्यं पवित्रं यजमानसा । चेतरामजी परपौत्री
वांसलस्य गोत्रीम् ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजी पौत्रीं सीतारामजी पुत्री ।
वरकन्या चिरंजीव जोड़ी अमर” ॥ ४ ॥

यह वर पक्षका पुरोहित पढ़े —

“साहनपति श्री साहजी, साहन के शिर छत्र । सांवलरामजी

परपौत्र हैं, गर्ग है जिनका गोत्र ॥ साहनपति श्री साहजी, साहनके शिर छत्र । श्रीकिसनजी परपौत्र हैं, गर्ग है जिनका गोत्र ॥ साहनपति श्रीसाहजी, साहनके शिर छत्र । मथुरादासजी परपौत्र हैं, गर्ग है जिनका गोत्र ॥ गोविन्दप्रसादजी पौत्र जगदीशप्रसादजी पुत्र । वरकन्या चिरंजीव जोड़ी अमर ।”

अथाऽमन्त्रण इलोकाः

(१) वर पक्षे —“गुरुरेकः कविरेकः सदसि मधोनः कलाधरोऽप्येकः । अद्भुतमन्त्र सभायां गुरुवः कवयः कलाधराः सर्वे” ॥१॥

(हे सम्बन्धिन् ! मधोनः इन्द्रस्य सदसि सभायां गुरुः एक एव कविः एक एव कलाधरोऽपि एक एव)

हे सम्बन्धिजी ! इन्द्र की सभा में एक ही गुरु वृहस्पतिजी हैं, और कवि शुक्राचार्य भी एक ही हैं और कलाधर चन्द्रमा भी एक ही हैं ।

(अत्र सभायां अद्भुतं यतः सर्वेऽपि सभासदः गुरुवः सन्ति कवयः सन्ति तथा सर्वेऽपि कलाधराः सन्ति)

यहाँ आपकी सभामें तो अत्यन्त ही आश्चर्य है क्योंकि सब गुरु ही गुरु और कवि ही कवि और कलाधर ही कलाधर हैं अर्थात् इन्द्र की सभा आपकी सभाके सन्मुख कुछ भी नहीं है यह अचरज है ।

(२) “अपटः कपटी हिमहीनरुचिः प्रथितः पशुरन्यकलत्ररतः । द्विजराज भवत्सदृशो न हरो न हरिनं हरिनं हरिनं हरिः” ॥ २ ॥

(हे द्विजराज ! भवत्सदृशः हरः शिवो न भवति यतः स अपटः)

हे द्विजश्रेष्ठ ! आपके समान शिवजी भी नहीं हैं क्योंकि वे अपट अर्थात् विना वस्त्र हैं आपके वस्त्र हैं ।

(एवं हरिविष्णुरपि भवत्सदृशो न यतः स कपटी)

और आपके समान विष्णु भी नहीं हैं क्योंकि वे असुरोंके नाशक हेतु छल कपट भी करते हैं आप तो निष्कपट हैं ।

(तथा हरिः चन्द्रोऽपि न यतः स हिमहीनरुचिः)

और चन्द्रमा भी आपके तुल्य नहीं है क्योंकि अतिशीतलता से उनका तेज हीन है आप तो तेजस्वी हैं।

(हरिः सिंहोऽपि न यतः स पशुः प्रथितः)

और सिंह भी आपके समान नहीं क्योंकि वह पशु प्रसिद्ध है आप मनुष्य हैं।

(तथा हरिः इन्द्रोऽपि न यतः स अन्यकलत्ररतः अस्ति)

और इन्द्र भी आपके समान नहीं है क्योंकि वह पराई स्त्री में रत है आप केवल निज स्त्री में रत हैं, आपमें तो एक भी दोष नहीं है इस कारण आप इन सबों में श्रेष्ठ हैं।

उभयपक्षे—

(३) “ब्रह्माऽभूच्चतुराननस्तव गुणान् वक्तुं यदा नाशकद्वद्वः पञ्चमुखो बभूव सततं स्तोतुं महोत्साहतः। स्कन्दश्चैवषडाननोऽभवदसौ शेषः सहस्राननो व्रीडामाप्य गतो भुवोऽधरतलं विप्रः कथं शक्नुयाम्” ॥ ३ ॥

(हे सम्बन्धिन् ! चतुराननः ब्रह्मा तव गुणान् वक्तुं यदा त अशक्त तदा रुद्रः पञ्चमुखो बभूव, स्तुति सततं कुर्वन् न पारमगमत्)

हे सम्बन्धीजी ! चार मुखवाला ब्रह्मा जब आपके गुणोंके कहने को समर्थ न हुआ तब रुद्र पांच मुख हो नित्य स्तुति करने लगे परन्तु वे भी पार को न प्राप्त हुए।

(स्कन्दः षडाननः अभूत् सोऽपि पारं न जगाम, शेषः सहस्राननः व्रीडामाप्य पातालं जगाम)

तब स्वामिकातिक छः मुख हो स्तुति करने लगे परन्तु पार को न प्राप्त हुए, तब शेष नागने सहस्रमुख हो स्तुति करने लगे परन्तु वे भी पार को न प्राप्त हुए तो लज्जित होकर पाताल को गये।

(तर्हि व्रीडाभारनतः अहं विप्रः कथं शक्नुयाम्)

तब लज्जाके भारसे झुका हुआ जो मैं एक मुखका ब्राह्मण आपकी स्तुति कैसे कर सकता हूँ।

(४) “अब्धौ विधौ वधुमुखे फणिनां निवासे स्वर्गं सुधा वसति वै विबुधा वदन्ति । क्षारं क्षयं पतिमृतिर्गरलं निपातः कण्ठे सुधा वसति वै भगवज्जनानाम्” ॥ ४ ॥

(हे सम्बन्धिन् ! वै इति निश्चयेन अब्धौ विधौ वधुमुखे फणिनां निवासे स्वर्गं सुधा वसति इति विबुधा वदन्ति)

हे सम्बन्धीजी ! यह निश्चय है कि समुद्रमें और चन्द्रमामें और स्त्रियोंके मुखमें और सर्पोंके निवासमें अर्थात् पातालमें अमृत वसता है ऐसा पण्डितजंन कहते हैं ।

(क्षारं क्षयं पतिमृतिः गरलं निपातः, वै भगवज्जनानां कण्ठे सुधा वसति)

परन्तु समुद्र तो खारा है, और चन्द्रमामें क्षय है, और स्त्रीमें जो पतिका मरण है; सर्पोंके निवासमें विष है, और स्वर्गसे अमृत गिरता है । इस कारण मैं कहता हूँ कि आप भगवज्जनोंके ही कण्ठमें अमृत वसता है ।

अथाऽशीर्वादात्मक पद्मानि

“लक्ष्मीस्ते पंकजाक्षीविलसतु भवने भारती कण्ठदेशे, वर्ढन्तां बन्धुवर्गाः प्रबलरिपुगणा यान्तु पातालमूले । देशे देशे सुकीर्तिः प्रसरतु भवतां कुन्दपूर्णन्दु शुभ्रा, जीवत्वं पुत्रपौत्रैः स्वजनपरिवृतो भोक्ष्यसे राज्यलक्ष्मीः” ॥ १ ॥

भावार्थ—हे राजन् ! कमल के पत्रके समान नेत्रों वाली लक्ष्मीजी आपके घरमें निवास करें । सरस्वती आपके कण्ठमें निवास करें तथा आपके बन्धुबान्धव वढ़ें । और आपके प्रबल शत्रु नाश को प्राप्त हों तथा आपकी कीर्ति जो कुन्द पुष्प और पूर्णचन्द्र के समान शुभ्र है वह देश देशान्तरमें फैल जावे । और आप स्वजनोंसे युक्त पुत्र पौत्रों के सहित राज्यलक्ष्मी को भोगते हुए चिरकाल तक जीते रहें ।

“आयुष्मान् भव पुत्रवान् भव भव श्रीमान् यशस्वी भव, प्रज्ञावान् भव भूरिभूतिकरणे दानैकनिष्ठो भव । तेजस्वी भव वैरिद्ध-

दलने व्यापार दक्षो भव, श्रीशम्भोर्भव पादपूजनरतः सर्वोपकारी भव” ॥ २ ॥

भावार्थ—आप चिरञ्जीवी हो, पुत्रवाला हो, श्रीवाला हो, यशवाला हो, कीर्तिवान् हो, तेजवाला हो, अति सम्पदाके निमित्त दान करने में प्रेमवाले हो, वैरियों के दर्पको चूर करने वाला हो, भगवान् शंकर के चरणों को पूजने वाला हो, सब पर उपकार करने-वाला हो ।

“आयुर्बलं विपुलमस्तु सुखित्वमस्तु सौभाग्यमस्तु विशदा तव कीर्तिरस्तु । श्रेयोऽस्तु धर्ममतिरस्तु रिपुक्षयोऽस्तु सन्तानवृद्धिरभिवांछित सिद्धिरस्तु” ॥ ३ ॥

आयु, बल, सुखित्व, सौभाग्य, फैली हुई कीर्ति, कल्याण, धर्ममें मति, शत्रुओं का नाश, सन्तान की वृद्धि तथा अभीष्टसिद्धि ये सब तुमको प्राप्त हों ।

“आयुद्रोणसुते श्रियो दशरथे शत्रुक्षयं राघवे, ऐश्वर्यं नहुषे गतिश्च पवने मानं च दुर्योधने । शौर्यं शान्तनवे बलं हलघरे सत्यं च कुन्ती सुते, विज्ञानं विदुरे भवन्तु भवतः कीर्तिश्च नारायणे” ॥ ४ ॥

आयु—अश्वत्थामा में, लक्ष्मी—दशरथ में, शत्रुनाश—राममें, ऐश्वर्य—नहुष में, गति—वायु में, अभिमान—दुर्योधन में, शूरता—भीष्म में, बल—बलराम में, सत्य—युधिष्ठिर में, विज्ञान—विदुर में, कीर्ति—नारायण, में जैसे हैं वैसे ही आपमें हो ।

कन्या पक्षका पुरोहित प्रस्थान के समय बोले—

“अश्वं गजं नैव हिरण्यदानं कौशेय वस्त्रं न च हेमरत्नम् । शुद्धां तु कन्यां प्रददामि तुभ्यं भवित प्रसादाद् द्विज (शिव) सम्प्रसीद” ॥

वर पक्षका पुरोहित बोले—

“लोके कीर्तिः कुले वृद्धिर्लक्ष्मीश्च गृहमागता । रत्नत्रयं मया लब्धं त्वत्प्रसादाद् (हिमाचल) द्विजोत्तम” ॥

संक्षेपतो 'गोत्रप्रवरनिर्णयः

- (१) अतिथिगोत्रस्य—आत्रेय—आर्चनानास—आतिथ्येति त्रयः प्रवरा: ।
- (२) अधमर्षणगोत्रस्य—वैश्वामित्राधमर्षण कौशिकेति त्रयः प्रवरा: ।
- (३) अगस्तिगोत्रस्य—आगस्त्य—दाढर्यच्युतेघवाहेति त्रयः प्रवरा: ।
- (४) अत्रिगोत्रस्य—अर्चन-अनस-श्यावाश्वेति त्रयः प्रवरा: ।
- (५) अजगोत्रस्य—वैश्वामित्र—माधुच्छन्दस रौहिणेति त्रयः प्रवरा: ।
- (६) आङ्गिरसगोत्रस्य — आङ्गिरसगौतमभारद्वाजेति त्रयः प्रवरा: ।
- (७) आष्टषेणगोत्रस्य — भार्गवच्यवनाप्नावानाष्टषेणानुपाः पञ्च प्रवरा: ।
- (८) आश्वलायनगोत्रस्य — भार्गववार्ध्यश्वदैवोदासास्त्रयः प्रवरा: ।

१ सप्तानां ऋषीणामगस्त्याव्टमानां यदपत्यं तद् गोत्रम्; तथा च प्रवरमञ्जवां बौधायनः—“गोत्राणान्तु सहस्राणि प्रयुतान्यवुदानि च । ऊनपञ्चाशदैवैषां प्रवरा ऋषि-दर्शनात् ॥ विश्वामित्रो जमदग्निर्भरद्वाजोऽथ गौतमः । अत्रिव॑शिष्ठकश्यप इत्येते सप्त ऋषयः ॥

गौड निवन्धे च—“मुख्यानि सप्तगोत्राणि शतानि प्रवराणि च । चत्वार्ँशत्त्वं र्युक्तं चतुर्दशशतानि च ॥ उपनामानि गौडानामुक्तानि ग्राम वासतः । देवर्षि देशजाताना ब्राह्मणानां तथैव च ॥”

“वशिष्ठः कश्यपोऽत्रिश्च गौतमोऽगस्त्यकौशिकौ । जमदग्निर्भरद्वाजो वत्स-पाराशरस्तथा ॥ शाण्डिल्यो वासुकी चित्रः सार्वर्णि कुशिकस्तथा । कल्पिषश्चाग्निवेषश्च विश्वामित्रः सुकालिनः ॥ कृष्णात्रेयः सुमित्रश्च शक्तिः सौपायनस्तथा । धृतकौशिक मोद्गल्यौ गर्गो विष्णु वृहस्पतिः ॥ सांस्कृतिकचाङ्गिरसश्च कण्वः कात्ययनस्तथा । कौण्डल्यः शुनको-उव्यश्च वैयाग्रपद्यकाञ्चनौ ॥ जैमिन्यावृक्वद्वाश्च तथा उलम्पायनादयः । एतेषां यान्यप-त्यानि तानि गोत्राणि मन्यते । वशिष्ठो गौतमोऽगस्त्यः कश्यपोत्रिश्च कौशिकः । जमदग्नि-र्भरद्वाजश्चैते गोत्रप्रवर्तकाः” ॥

- (९) आशालिगोत्रस्य—आङ्गिरस—गौतम-शारद्वन्तेति त्रयः
प्रवरा: ।
- (१०) आरुणिगोत्रस्य—पुरुदसु—पुरुकुत्स—आङ्गिरसेति त्रयः
प्रवरा: ।
- (११) आष्टकिगोत्रस्य—वैश्वामित्र-माधुच्छन्दस आष्टकेति
त्रयः प्रवरा: ।
- (१२) उपमन्युगोत्रस्य—उपमन्यौतथ्याङ्गिरसास्त्रयः प्रवरा: ।
- (१३) उलूकिगोत्रस्य—वैश्वामित्र-दैवरात-उलूकेति त्रयः प्रवरा: ।
- (१४) उद्भालकिगोत्रस्य—भाषणेत्येक प्रवरः ।
- (१५) क्रृचीकिगोत्रस्य—भार्गवार्षिषेण क्रृचीकास्त्रयः प्रवरा: ।
- (१६) औशनगौत्रस्य—औशनस भरद्वाजशब्देन्द्रास्त्रयः प्रवरा: ।
- (१७) औतथ्यगोत्रस्य—गौतमाङ्गिरसौतथ्यास्त्रयः प्रवरा: ।
- (१८) औदलगोत्रस्य—वैश्वामित्र-दैवरात औदलेति त्रयः
प्रवरा: ।
- (१९) कात्यायनगोत्रस्य—कात्यायनविष्णवङ्गिरसस्त्रयः प्रवरा: ।
- (२०) काश्यपगोत्रस्य—काश्यपावत्सारनैध्युवास्त्रयः प्रवरा: ।
- (२१) कौशिकिगोत्रस्य—कौशिकात्रिजमदग्न्यस्त्रयः प्रवरा: ।
- (२२) कृष्णात्रिगोत्रस्य—कृष्णात्रेयाप्नवान सारस्वतास्त्रयः
प्रवरा: ।
- (२३) कौण्डन्यगोत्रस्य — कौण्डन्यास्तीककौशिकास्त्रयः
प्रवरा: ।
- (२४) कापिष्ठलगोत्रस्य—वशिष्ठेत्येकः प्रवरः ।
- (२५) कौण्डन्यगोत्रस्य—कौण्डन्य—वशिष्ठ—मित्रावरुणास्त्रयः
प्रवरा: ।
- (२६) कौशल्यगोत्रस्य—गरुपमाहेन्द्रमयोभुवस्त्रयः प्रवरा: ।
- (२७) कौत्सगोत्रस्य—आङ्गिरसकौत्ससांख्यायनास्त्रयः प्रवरा: ।
- (२८) कौथुमगोत्रस्य—आङ्गिरसबार्हस्पत्यभरद्वाजवान्दनमात-
वचसेति पञ्च प्रवरा: ।

(२९) कौशिकगोत्रस्य — कौशिकाधर्मर्षण—विश्वामित्रास्त्रयः
प्रवरा: ।

- (३०) क्षत्रिगोत्रस्य—मानव-एल-पौरु-रवस्त्रयः प्रवरा: ।
- (३१) कपिगोत्रस्य—आञ्जिरसमहीयवौरुक्षमसेति त्रयः प्रवरा: ।
- (३२) कतगोत्रस्य—वैश्वामित्रकात्यालीकेति त्रयः प्रवरा: ।
- (३३) कालबलगोत्रस्य—दैवरातविश्वामित्रौदलेतित्रयः प्रवरा: ।
- (३४) कामकायनगोत्रस्य—वैश्वामित्र—दैवश्रवस दैवतरसेति त्रयः प्रवरा: ।
- (३५) कपिलगोत्रस्य—आञ्जिरसवार्हस्पत्यभरद्वाजेति त्रयः प्रवरा: ।
- (३६) कक्षीवद् गोत्रस्य—आञ्जिरसौतथ्यदैर्घ्यतमसेति त्रयः प्रवरा: ।
- (३७) कण्वगोत्रस्य—कण्वाञ्जिरसाजमीढेति त्रयः प्रवरा: ।
- (३८) कालगोत्रस्य—वैश्वामित्रदैवरातौलेतेति त्रयः प्रवरा: ।
- (३९) गर्गगोत्रस्य—आञ्जिरस-भारद्वाज-वार्हस्पत्यश्रवतगर्गेति पञ्च प्रवरा: ।
- (४०) गविष्ठिरगोत्रस्य—आत्रेयगविष्ठिरपौर्वातिथेति त्रयः प्रवरा: ।
- (४१) गार्गगोत्रस्य — गार्ग्यधूतकौशिकमाण्डव्याथर्ववैशम्पायनेति पञ्च प्रवरा: ।
- (४२) गालवगोत्रस्य — विश्वामित्रदैवरात — औदुम्बरास्त्रयः प्रवरा: ।
- (४३) गृत्समद्गोत्रस्य—गात्समदेत्येकः प्रवरः ।
- (४४) गोभिलगोत्रस्य—गोभिलासितदेवलास्त्रयः प्रवरा: ।
- (४५) गौतमगोत्रस्य—गौतमाञ्जिरसौतथ्येति त्रयः प्रवरा: ।
- (४६) धूतकौशिकगोत्रस्य—धूतकौशिककौशिक विश्वामित्रास्त्रयः प्रवरा: ।
- (४७) चिकितगोत्रस्य—वैश्वामित्र-दैवरात औदलास्त्रयः प्रवरा: ।

- (४८) जमदग्निगोत्रस्य—जामदग्न्यौवंशिष्ठास्त्रयः प्रवरा: ।
 (४९) जैमिनिगोत्रस्य—जैमिन्यौतथ्यसांकृतयस्त्रयः प्रवरा : ।
 (५०) जातूकण्यगोत्रस्य—वशिष्ठात्रेयजातूकण्येति त्रयः प्रवरा: ।
 (५१) तण्डिगोत्रस्य—आञ्जिरस गौरिवीत सांकृतेति त्रयः
 प्रवरा: ।

(५२) दर्भगोत्रस्य—आञ्जिरस—अम्बरीष—यौवनाश्वेति त्रयः
 प्रवरा: ।

- (५३) दालभ्यगोत्रस्य—कश्यपावत्सारने ध्रुवास्त्रयः प्रवरा: ।

(५४) दीर्घतमगोत्रस्य—आञ्जिरस—औतथ्य दीर्घतमसेति त्रयः
 प्रवरा: ।

- (५५) देवलगोत्रस्य—शाण्डिल्यासितदेवलास्त्रयः प्रवरा: ।

- (५६) देवरातगोत्रस्य—वैश्वामित्र देवरातौदलास्त्रयः प्रवरा: ।

- (५७) दैवन्त्यायनगोत्रस्य—भार्गव—वैतहव्यसावेतसेति त्रयः
 प्रवरा: ।

(५८) द्वचामुष्यायणगोत्रस्य—आञ्जिरस—वार्हस्पत्यभारद्वाज—
 कात्याक्षीलाः पञ्च प्रवरा: ।

(५९) धनञ्जयगोत्रस्य—वैश्वामित्र—माधुच्छन्दस—धानञ्ज—
 येति त्रयः प्रवरा: ।

(६०) निरुकिगोत्रस्य—पुरुदसु—पुरुकुत्स—आञ्जिरसेति त्रयः
 प्रवरा: ।

- (६१) नैधुवगोत्रस्य—काश्यपावत्सार नैधुवास्त्रयः प्रवरा: ।

- (६२) पराशरगोत्रस्य—शक्तिवशिष्ठ पराशरास्त्रयः प्रवरा: ।

- (६३) पृष्ठदश्वगोत्रस्य—आञ्जिरस—पार्षदश्व वैरूपास्त्रयः
 प्रवरा: ।

(६४) पिङ्गगोत्रस्य—आञ्जिरस—अम्बरीष यौवनाश्वेति त्रयः
 प्रवरा: ।

(६५) पुरुकुत्सगोत्रस्य—आञ्जिरस पौरुकुत्सत्रसदस्यवेति त्रयः
 प्रवरा: ।

- (६६) पूतिमाषगोत्रस्य—आङ्गिरस—गौरिवीति सांकुर्तेति त्रयः
प्रवरा: ।
- (६७) पूरणगोत्रस्य—वैश्वामित्र—दैवरात—पौरणेति त्रयः
प्रवरा: ।
- (६८) पैष्पलाद गोत्रस्य—वशिष्ठ—मैत्रावरुण पैष्पलादेति त्रयः
प्रवरा: ।
- (६९) बृहदग्निगोत्रस्य—वैश्वामित्र—दैवरातौदलेति त्रयः प्रवरा: ।
- (७०) बञ्चुगोत्रस्य—वैश्वामित्र—दैवरातौदलेति त्रयः प्रवरा: ।
- (७१) बृहदश्वगोत्रस्य—आङ्गिरस—वार्हदुकथ्य गौतमेति त्रयः
प्रवरा: ।
- (७२) नास (ल) गोत्रस्य—भार्गव च्यावनाप्नवानौर्वजामदग्न्याः
पञ्च प्रवरा: ।
- (७३) बैजवापगोत्रस्य—अत्रिगविष्ठिरपूर्वार्धस्त्रयः प्रवरा: ।
- (७४) भद्रणगोत्रस्य—पुरुदसु पुरुकुत्साङ्गिरसेति त्रयः प्रवरा: ।
- (७५) भारद्वाजगोत्रस्य — भारद्वाजाङ्गिरसबाहृस्पत्यास्त्रयः
प्रवरा: ।
- (७६) भार्गवगोत्रस्य—भार्गवच्यवनाप्नवानौर्वजामदग्न्याः पञ्च
प्रवरा: ।
- (७७) भालन्दनगोत्रस्य — भालन्दनगविष्ठिरपूर्वातिथयस्त्रयः
प्रवरा: ।
- (७८) मर्षणगोत्रस्य—पुरुदसु-पुरुकुत्साङ्गिरसेति त्रयः प्रवरा: ।
- (७९) मन्द्रणगोत्रस्य—पुरुदसु पुरुकुत्साङ्गिरसेति त्रयः प्रवरा: ।
- (८०) मरीचिगोत्रस्य—भार्गव-वैतहव्य-सावयसेति त्रयः प्रवरा: ।
- (८१) मनुतन्तुगोत्रस्य—वैश्वामित्र—दैवरातौदलेति त्रयः प्रवरा: ।
- (८२) मान्धातृगोत्रस्य—मान्धातृ-अम्बरीष यौवनाशवेति त्रयः
प्रवरा: ।
- (८३) माध्यन्दिनगोत्रस्य—वशिष्ठ—शाकत्य—पराशरेति त्रय
प्रवरा: ।

- (८४) मार्कण्डेयगोत्रस्य—जामदग्न्यौर्वाप्नवानेति त्रयः प्रवराः ।
 (८५) मित्रयुगोत्रस्य—भार्गव-दैवोदासवाधर्यश्वेति त्रयः प्रवराः ।
 (८६) मौद्गल्यगोत्रस्य—मौद्गल्याङ्गिरस वार्हस्पत्येति त्रयः

प्रवराः ।

- (८७) मौनगोत्रस्य—भार्गववैतहव्य सावेतसेति त्रयः प्रवराः ।
 (८८) मौकगोत्रस्य—भार्गववैतहव्य सावेतसेति त्रयः प्रवराः ।
 (८९) माधुच्छन्दसगोत्रस्य—वैश्वामित्र-माधुच्छन्दस-धानञ्ज-

येति त्रयः प्रवराः ।

- (९०) याज्ञवल्क्यगोत्रस्य — याज्ञवल्क्याङ्गिरसाजभीढास्त्रयः
 प्रवराः ।

- (९१) यास्कगोत्रस्य—यास्कमित्रयुववैन्यास्त्रयः प्रवराः ।
 (९२) रथीतरगोत्रस्य—आङ्गिरस—वैरूप्य-पार्षदश्वेति त्रयः

प्रवराः ।

- (९३) राहुगणगोत्रस्य—आङ्गिरस—गौतम शारद्वन्तेति त्रयः
 प्रवराः ।

- (९४) रैभगोत्रस्य—काश्यपावत्साररैभास्त्रयः प्रवराः ।

- (९५) रौक्षायणगोत्रस्य—आङ्गिरस—वार्हस्पत्यभारद्वाजवान्दन-
 मातवचसेति पञ्च प्रवराः ।

- (९६) रौहिणगोत्रस्य—वैश्वामित्र-माधुच्छन्दस रौहिणेति त्रयः
 प्रवराः ।

- (९७) लौहिताक्षगोत्रस्य—वैश्वामित्र-गाधिन वैणवेति त्रयः

प्रवराः ।

- (९८) लौगाक्षिगोत्रस्य—आङ्गिरस-साङ्कृत्य गौरिवीतेति त्रयः

प्रवराः ।

- (९९) लौहितजहूगोत्रस्य—वैश्वामित्र-गाधिन वैणवेति त्रयः

प्रवराः ।

- (१००) वत्सगोत्रस्य—और्वच्यवन भार्गवजामदग्न्याप्नवाना:

पञ्च प्रवराः ।

- (१०१) वशिष्ठगोत्रस्य—वशिष्ठात्रिसांकृतयस्त्रयः प्रवरा: ।
 (१०२) वबगोत्रस्य—वैश्वामित्र देवरातौदलेति त्रयः प्रवरा: ।
 (१०३) वास्कलगोत्रस्य—वैश्वामित्र—देवरात पौरणेति त्रयः
 प्रवरा: ।
 (१०४) वात्स्यायनगोत्रस्य—आङ्गिरस गौतम शारद्वन्तेति त्रयः
 प्रवरा: ।
 (१०५) वादरायणगोत्रस्य—पुरुदसु—पुरुकुत्साङ्गिरसेति त्रयः
 प्रवरा: ।
 (१०६) वामरथ्यगोत्रस्य—आत्रेयार्चनानसातिथ्येति त्रयः
 प्रवरा: ।
 (१०७) वासलगोत्रस्य—भार्गवच्यावनाप्नवानौर्वं जामदग्न्ये-
 ति पञ्च प्रवरा: ।
 (१०८) वाध्यश्वगोत्रस्य—वाध्यश्वेति एकः प्रवरः ।
 (१०९) वारिधायनगोत्रस्य—वैश्वामित्र—देवरात पौरणेति
 त्रयः प्रवरा: ।
 (११०) वाधूलगोत्रस्य—भार्गव—वैतहव्य—सावेनसेति त्रयः
 प्रवरा: ।
 (१११) वामदेवगोत्रस्य—आङ्गिरस—वामदेव—गौतमेति त्रयः
 प्रवरा: ।
 (११२) विष्णवृद्धिगोत्रस्य—विष्णुवृद्धि—पौरुकुत्सत्रसदस्यंव-
 स्त्रयः प्रवरा: ।
 (११३) विदलगोत्रस्य—वैश्वामित्र देवरातौदलेति त्रयः प्रवरा: ।
 (११४) विश्वामित्रगोत्रस्य—विश्वामित्र वृहस्पति वृषभुणा-
 स्त्रयः प्रवरा: ।
 (११५) वीतहव्यगोत्रस्य—यास्क—वाधूल—मौनमौकास्त्रयः
 प्रवरा: ।
 (११६) वैजवापगोत्रस्य—अत्रि गविष्ठिर पूर्वाद्विति त्रयः
 प्रवरा: ।

(११७) वैशम्पायनगोत्रस्य—वैशम्पायन—विश्वामित्र जमदग्न-
यस्त्रयः प्रवरा: ।

(११८) वैन्यगोत्रस्य—भार्गव वैन्य पार्थेति त्रयः प्रवरा: ।

(११९) वेणुगोत्रस्य—वैश्वामित्र गाधिन वैणवेति त्रयः प्रवरा: ।

(१२०) शठगोत्रस्य—पुरुदसु—पुरुकुत्स—अंगिरसेति त्रयः प्रवरा: ।

(१२१) शम्बुगोत्रस्य—आंगरिस—गौरिवीत—सांकृतेति त्रयः
प्रवरा: ।

(१२२) शरद्धन्तगोत्रस्य—आंगरिस—गौतम शारद्धन्तेति त्रयः
प्रवरा: ।

(१२३) शाण्डिल्यगोत्रस्य—शाण्डिल्यासितदेवलेति त्रयः प्रवरा: ।

(१२४) शालंकायनगोत्रस्य—शालंकायनावत्सारनैध्रुवांगिरस
बाहृस्पत्येति त्रयः प्रवरा: ।

(१२५) शाक्यगोत्रस्य—शाक्य—गौरिवीत सांकृत्येति त्रयः
प्रवरा: ।

(१२६) शालिनीगोत्रस्य—वैश्वामित्र—देवरात औदलेति त्रयः
प्रवरा: ।

(१२७) शाक्यावतगोत्रस्य—वैश्वामित्र—देवरात औदलेति
त्रयः प्रवरा: ।

(१२८) शार्करागोत्रस्य—भार्गव—वैतहव्य—सावेतसेति त्रयः
प्रवरा: ।

(१२९) शालाक्षगोत्रस्य—वैश्वामित्र गाधिन वैणवेति त्रयः
प्रवरा: ।

(१३०) श्येतगोत्रस्य—भार्गव—वैन्य—पार्थेति त्रयः प्रवरा: ।

(१३१) शैवगोत्रस्य—आंगिरस—गौरिवीत सांकृतेति त्रयः
प्रवरा: ।

(१३२) शौनकगोत्रस्य—शौनकशौनहोत्र गृत्समदेति त्रयः
प्रवरा: ।

(१३३) श्रौमतगोत्रस्य—वैश्वामित्र—दैवश्रवस दैवतरसेति
त्रयः प्रवरा: ।

(१३४) सावर्णगोत्रस्य—सावर्ण्यौ वैच्यवनभार्गव जामदग्न्या-
प्नवानेति पञ्च प्रवराः ।

(१३५) साङ्कटिगोत्रस्य—सांकृत्याङ्गिरसगौरिवीतेर्ति त्रयः
प्रवराः ।

(१३६) सांख्यायनगोत्रस्य—सांख्यायन वाचस्पत्याङ्गिरस श्रवत-
गर्गेति पञ्च प्रवराः ।

(१३७) साहुलगोत्रस्य—वैश्वाभित्र गाधिनवैणवेति त्रयः प्रवराः ।

(१३८) सात्यकिगोत्रस्य—पुरुदसु—पुरुकुत्यस—अंगिरसेति त्रयः
प्रवराः ।

(१३९) सात्यकायनिगोत्रस्य—पुरुदसु—पुरुकुत्यस—अंगिरसेति
त्रयः प्रवराः ।

(१४०) सोमवातगोत्रस्य—आगस्त्य—दाढर्चच्युत सौमवाहेति
त्रयः प्रवराः ।

(१४१) सुमङ्गलगोत्रस्य—आत्रेय—आर्चनानस—आतिक्ष्येति
त्रयः प्रवराः ।

(१४२) हारीतगोत्रस्य—आंगिरसाम्बरीष यौवनाश्वास्त्रयः
प्रवराः ।

आदि गौड़' ब्राह्मणों के गोत्र व शासन

(१) परवृद्ध वशिष्ठ गोत्रः—तिगुणायत, झीभरिया, झर्मरिया,
विजयचारण, गोठवाल, हलदोलिया, नूणीवाल, चौबेप्रधान, द्विवेदी
प्रधान, नरवालिया, ब्रह्मपुरिया, झर्मरपुरिया, मंडोरिया, कुरुक्षेत्री,
सिरोहीवाल, सर्पदमा, कुंडोलिया भद्रासिया, बासोतिया, चान्दौ-

१ स्कन्दपुराणे गौडस्मृतौ च — “देवर्षि गौडदेशाच्च ह्यादिगीडा समागताः ।
द्वापरान्ते महातीर्थे सर्पयज्ञे तपोधनः ॥ तेऽस्यो राजा ददौ ग्रामान् सम संख्यात्मकान् मुदा ।
चत्वारिंशचतुर्युक्तं चतुर्दशशतानि च” ॥

ब्राह्मणोत्पत्तिनिबन्धे गौडस्मृतौ च — “आदिगीडद्विजाः सर्वे ब्रह्मार्षि देश-
वासिनः । वेदशस्त्रपुराणज्ञाः श्रीतस्मार्तपरायणाः ॥ शाखामाध्यन्दिनी तेषां वेदः शुक्लयजुः
स्मृतः । वशिष्ठादीनि गोत्राणि सुत्रं कात्यायनं परम् ॥ वेदाब्ध्यव्यधीन्दु ग्रामाणां शासना-
च्छासनाः स्मृताः । पूज्याः सर्वोत्तमा गौडा मद्य मांसविवर्जिताः” ॥

लिया, मैनवाल, रामहृदिया, थानेसरिया, गंगावासी, बड़ीवाल, पिंडारा, सफीद्मीवाला ।

(२) वशिष्ठ गोत्र :—सिवाल, बूटोलिया, सुरोलिया, कंकरीट, नाथोलिया, चूलहट, खैरवाल, बलाचिया, बांकोलिया, कलानोरिया, धामाणी मिश्र, बवेरवाल, नारेला, उपाध्याय, घमूणिया, गौडवाल, खरवालिया, नारनोलिया, विदुरिया, चुलकाणिया गोस्वामी, सुनपातिया, द्विजाणिया, गौड़ ग्रामियां, शिवपुरिया, उग्रतपा, मिश्र, गोगाणी, आटोलिया, विजणेट, नैचाणिया, गोधड़िया, पहाकतारी, सोरिया, फरमाणिया, चूरोलिया, व्योंहाल, नालियारिया, बवरोलिया, बड़गामियां, बड़ीठवाल, सिलाणिया, दिवाचिया, विश्वभरा प्रधान, वियाला, वासोतिया, कथलिया, देवलिया, औढाका, सूठया, बरताड़, पतालीमा, सिमावत, लूणीवाल मता, कुलता जपरिया, तुन्दवाल, खारीवाल, खेड़ीवाल, सोरथिया, गील, गिलाण, रामायणिया, चानगान, बब्बरवाल, टिलावत, मार्जनी, गंगावत, अडिचवाल जोशी ।

(३) गौतम गोत्र :—इन्दौरिया, पटोदिया, दोरलिया, दूलोणिया, दोहलिया, व्यौलिया, नौताणिया, ऋतभरा, बोघड़, गन्धर्ववाल, पाण्डचाना, पांतिए, झूड़िया, कनोड़िया, मुहालवान, शाठिया, वाजरे सिम्मनवाल पाण्डे, बाड़ीवाल चौधरी, झाड़ोलिया परधान ।

(४) काश्यप गोत्र :—कुरुक्षेत्रिया, गुडपुरिया, चुलकाणियां, थानेसरिया, मनचकी ।

(५) आत्रेय (अत्रि) गोत्र :—ढंद, ढीगथलिया, झाड़ोलिया, झाड़ेलिया जोशी, त्रिपाठी, रतिवाल, रोहीतिया, सिरसोनिया, व्यास, कनखलिया, बलेणिया, गौडपुरिया, घोरतपा, सर्पदमा, कारपूंडिया, तुसामरिया, डीडवानिया, पांडचाण, टंडपाडे, सागवाल, गनवारिया, जीन्दिया, केडेलिया, वुपणवाल, दिसावड़, कुन्धरा (पंडा), बड़ीवाल, फुलड़िये, बड़ीवाल मोटा, नागवाण, मंगलोरिया, कसमपरिया, धुन्चोलिया, मारोलिया, नेधलिया, सांखोलिया, सिरसाणिया, मोटेका तुसाणिया, तुसामिया, भेड़ा, खाकस्या, कृकसा, मागस, मोगरा, मन्डोलिया, रामे, रावलमा, सिरसाणिया, मोटे ।

(६) कृष्णात्रेय गोत्र :—निर्मल, रेवलिया, बंबेरवाल, ब्रह्मवेदिया, चुनकटिया, काकर ।

(७) अगस्त्य गोत्रः—महर्षि, बाज्जडा, तपोधरा, उञ्छला, शुल्कपुरिया, विद्याधरा, स्याणियां, सालोठिया, पीहूवाल, व्यास।

(८) कौशिक गोत्रः—दीक्षित, भरींडवाल पिलोद्या, लाटा, डोकवाल, झीमरिया, पैँवालिया करीरहट, नगरवाल फटवाडियाव्यास, बिढाट, सिंहवाल, विषकरियां, दाना, चतुर्वेदी, ब्रजवाल, कवर्सवाल, भूदोज, गांधरा बगरहटा बाहनदिया, बाघडोलिया, घांघसाणी, कोटिया, स्याणियां गोरखपुरिया, बृहदाणियां शिरोहीवाल गौगाणी, मंगलोरिया; मंडालवाल, मठवाल, महरवाल नाकडे, पिंडाणे बरसिया चूल्हेठ, ऊँटलोदिया, कांकर, तिगडाणिया, बराड़,

ब्राह्मणोत्पत्तिनिवन्धे—नित्यकर्मप्रयोगभालायाज्ञ—“आदौ ये ब्राह्मणा जाता ब्रह्मक्षेत्रे^१ तपोधनाः । सर्वे वेदधरा लोके सदाचार प्रवर्तकाः ॥ आदिगौडाश्च ते ज्ञेया ब्रह्मक्षेत्रनिवासिनः । तेभ्यो विनिर्गता भूम्यां प्रसिद्धा दश ब्राह्मणाः ॥ सारस्वताः कान्यकुड्जा गौडाश्चोक्तलमैथिलाः । पंचगौडा—समाख्याता विद्योत्तरनिवासिनः ॥ कर्णाटकाश्च तैलंगा द्राविडा गुर्जरास्तथा । महाराष्ट्राश्च पंचैते विद्यदक्षिणवासिनः । तेभ्यो विनिर्गता भूम्यां चतुराशीति ज्ञातयः । अन्येऽपि बहवः संति प्रकीर्णाश्चोपत्राद्युणाः । गौडद्राविडभिन्नास्ते मिश्रिताः सर्वज्ञातयः । वसन्ति दैवयोगेन ब्राह्मणा यत्र तत्र वै ॥ परस्परं च ते विप्रा ह्यमवन् भिन्नपक्तयः । खानपानसदाचारात्सम्बन्धोऽप्यभवत्पृथक् ॥ आदिगौडसमीपस्थाः पंचगौडाद्विनिर्गताः । पंचद्राविड संभूताः कथयामि यथाक्रमात् ॥ चतुर्दशशतां ग्रामाश्चत्वारिंश्चतुर्युताः । गौडानां तेषु वासाद्वैतायताः सासनाः स्मृताः ॥ जीवान्धर्म च विद्यां च विप्रा रक्षन्ति सर्वदा । “गुडरक्षण” इत्यस्माद्वातोग्नोऽपदं भवेत् ॥ गौडा विशविधाज्ञेया आदिगौडाश्च निर्गताः । हीना हीनतरा केचिद्दीनकर्मनियोगिनः ॥ वाशिष्ठा मालवी गौडाः सनाठ्या वेदयागिनः । गंगातटस्था गौडाश्च हर्यणा गौड सौरभाः ॥ माधुराश्चैव श्रीगौडास्तथा सूर्यध्वजाह्वयाः । चौराशीयेतिनामायादालभ्याः सुखसेनकाः ॥ भट्टनागरगौडाश्च वाल्मीकी गौडगुर्जराः । कौशिकाश्च महागौडा दशगौडा धराकराः ॥ हीना सप्तदशाः पूर्वा अपरा हीनतराश्रयाः । विद्याकर्मविहीनास्तु विप्राः शूद्रसमाः स्मृताः” ॥

१. गौडस्मृतो—“श्वेतवाराहकल्पेऽस्मिन् ब्राह्मणावेदपारगाः । आदि गौडाः कुरुक्षेत्रे जाताः सर्वे तपोधनाः ॥”

महाभारते—“ब्रह्मवेदिः कुरुक्षेत्रं पञ्च रामहन्दान्तरम् ।

ब्रह्मद्वयं कुरुक्षेत्रं द्वादशयोजनावधि ॥”

ब्रह्मपुराणे च “आदौ जाता कुरुक्षेत्रे ब्राह्मणा वेदपारगाः । श्वेतवाराह कल्पेऽस्मिन्नादि

गौडास्तपोधनाः ॥ इति ।

ब्रह्मक्षेत्रे—कुरुक्षेत्रे इत्यर्थः ।

काभिय फुटवा, कलानोरिया, कुराणवाल, कँकड़, विजयचारण बान्हाया, जैत्सरावत्त, वुरा, आष्टायण, सांखोलिया ।

(९) भारद्वाज गोत्रः—चाकलाण, गारवाल, धर्ड, पचलंगिया, इन्दोरिया, सिंडोलिया, भाथरा, कालूंडिया, गोग्याण, सहल, नागवाण, नरेडा, तुनगरिया, वामणोलिया, ढांचोलिया, लूणी-वाल, बियाला, महर्षिया, पाठक, गंगावत, कलावटिया, विवाल, पितरोत, खन्तवाल, डोडवाडिया, खरींठ, सातोरिया, डोल्या, मलु, बवेर, गिल्याण, बिजेचाण, टिकणायत, पासलोटिया, चतो-सरीया, रतेलवाल, रामपरिया, सुरोलिया दुबे, न्यायस्थानी, पंवालिया, बड़ीवाल, केडेवाल, चौबेलाल, गोधडिया, विजणेट, टंडोलिया, भिवाल, बावेलिया, बलोचिया, अलवरिया, सींभला, पराशसिया, अंगूठिया, भरथलिया, भारतीया, चांदो-लिया, मंढाणिया, चौराणी व्योरिया, विजयवाणी, निरथलिया, सीलोठिया, कांकणोधिया, सांवलोदिया; विश्वम्भरा, सांकलश, संपलवाल, मांडोठिया, शिवाहया, दुलीणहट, सागवाल, बरनैया, गीजवाल, डबोधिया, पीठवाल, सिरसौलिया, गोसरत, निगमबोधिया, तपोधना, सर्पदमा, दांतोलिया, नेतवालिया, अलसे-लिया, भडचक्की, टंटप्रधान, पेटवाडिया, सांतोरिया, जयवाल, डूंगरपुरिया, नातवाल, पीहूंवाल, गलियन, गिलाण, कटवाडिया, बोहरिया भूंवाल, गाल्याण, बांकोलिया, नूणीवाल नाहरिया, गौडिया, महता, उमरावतिया, गुड़गामिया, मामडोलिया, शाणौलिया, नरहेडवाल, निरालिया, रांईवाल विडाहट, ठिकरिया, पाधिया, चौबेप्रधान, सिन्दोलिया, पलडिया, भाटुका, बडथलिया, कुंजवाल, बुंमरा, धूपला, पान्डीया, तालड़, पंचेली, थणकटा, चावण्डया, नाड़, पावटा, दामानील, कूठिला, सोरठया, काठ, बडवालिया, बागला, बीमा, बाक्षा, रहथला, धंरल, लाम्बा, डडवाडया, रोलिवाल, डोरवाल, खरवाल, बटोले, गोधलिया कामड़ीवाल, सिन्दोलिया, कंकरीट, तोस्याण, मरोलिया, भींडा, झाडोदिया ।

(१०) जमदग्नि गोत्र :—रतेलवाल, बसूंडवाल, मुदहहट ।

(११) वत्स गोत्रः—झीमरिया, वलमिया, मंजीठवाल, बहंडोलिया, गोहरिया, नागरवाल, मरहटा, सिकारा, नागवाण, चौहनवाल, मंडावरिया, घाटसरिया, बोरा, झमन ।

(१२) मुग्दल गोत्र :—बावलिया, कसारिया, काक्याणी, चुरोलिया, भींडा जोशी, चुलकाणिया, काक्याण, रामूङ्गमा ।

(१३) पाराशर गोत्र :—बागडोलिया, खेड़वाल, हिंसारिया, गुजरका, रामगढ़िया, झडसैया, नरहड़ा, करनालिया, मूंधडत । लोकण्डा ।

(१४) शाष्ठिल्य गोत्र :—हरितवाल, चूल्हीवाल, बसूंडवाल, वरुणवाल, नंगूरवाल, पंचोलिया, भप्यावलिया, पर्वती, कलीनूरा, रुलवाल, कण्डवाल । पाठक, चैतपुरिया,, मोनस, भट्टावलिया तिवाड़ी, सोजतमा ।

(१५) हारित गोत्र :—चौमाल, सालवाल, साँभरिया, काणूवड़िया, चोहमेवाल, खोज, कण्डीरा ।

(१६) अञ्जिरा गोत्र :—बंवेरवाल, चौबेदीक्षित, गंगापुरिया, मिरचिया । छाजावत, गीलारया, गिलाण, नगरवाल ।

(१७) जैमिनिगोत्र—महतपा, जैमनिया, धर्मपुरिया,

(१८) शौनक गोत्र :—भादुपोता,

(१९) ओसेश्वर गोत्र :—फटवाडिया,

(२०) सुपर्ण गोत्र :—नगूवाल, निगरवाल, नगूरा ।

(२१) भृगु गोत्रः—डडवालिये, रामे प्रधान, अभीस्य प्रधान, कलसोता, मन्दोरमा ।

(२२) हरितस गोत्र :—चम्हाल ।

(२३) पिप्पलायन गोत्र :—आबैठया प्रधान, भोगराण प्रधान, चान्दोलिया प्रधान, विसम्बरा प्रधान,

(२४) व्योंग गोत्र :—कल्याण,

(२५) सांकृत्य गोत्र :—त्रिवेदी—(तिवाड़ी)

तिवाड़ियों के भेद :—चूलीवाल—तिवाड़ी, तायगा—तिवाड़ी, घुड़चढ़िया—तिवाड़ी, भदंया—तिवाड़ी, परासरिया—तिवाड़ी, फलोड़िया—तिवाड़ी, भटावला—तिवाड़ी, रोड़ी—तिवाड़ी, कोरक—तिवाड़ी, वहरोड़िया—तिवाड़ी ।

(२६) चाँन्द्रायण गोत्र :—चन्दणिया ।

(२७) गालब गोत्र :—काठ ।

(२८) कौत्स गोत्र :—काकर ।

जिनके गोत्र की जानकारी नहीं हो सकी है—

लोहचवा, सिरसाणीया, कन्दवाल, वाणीवाल, भालोटिया, पंचोली, कलेड़िया, कुम्भेरी पांडे, वाड़ी कोरक तिवाड़ी, मसूणिया दुबे, भदुल्या दुबे, मोडरावत तिवाड़ी, निराण, अग्निहोत्रिया, याजका, कुशंधरा, कुधंधरा, रजोधरा, भजकवड़ा, कंचनपुरिया, श्याम पाण्डच्या, मनोहरा, भूमियां, भुंवारिया, सीकरिया, ऋषिपोता सेंथिया, आचार्या, ज्ञानपुरिया, मिग्नहवाल, भट्टपुरिया, लुहाणिया, चूहेट, तिलोडिया, खरीट, बरीवाल, दोराड़, पचोल, बड़वाल, भीरुका, सीमणिया, चालीण, सेवल, सरसोलिया, भीसवरा, फैवारिया, लावालिया, रीछावत, बासुबोरा, चाकोलिया, गूरावा बेडतिया, बेदी, श्रोत्रिय, महता गवाटी, स्वामी गोस्वामी, पुरोहित, अटिल, अरुदयाल, आमेरा, अखल्या, उड़ीचवाल, करबाल, कोखतला, कंकरोलिया, कोहवाल, कालचड़ा, करौता, खजवाणिया, गोपीवाल, चेचावा, चूपल, चोईवाल, छिछोलिया, छड़िया, भरोणीया, डोईवाल, परवाल पल्लीवाल, पुंचाल,

सूचना — मेरी इच्छा गोत्र व शासनोंकी विशद तालिका बनाने की है सो विद्वानों एवं भूदेवों तथा गौड़बन्धुओंसे प्रार्थना है कि वे उपर्युक्त तथा अन्य गोत्र व शासनों का विशेष विवरण भेजने की कृपा करें । जिन गौड़ बन्धुओं का इनमें अपना गोत्र व शासन नहीं आया है वे अपना गोत्र व शासन लिखकर भेज देवें । संग्रहीत गोत्र व शासनों के संकलन में पं० श्री जीवानन्दजी “आनन्द” विद्यावाचस्पति का जो प्रयास रहा है वह स्तुत्य है ।

पेड़ीवाल, पालड़िया, बेड़ीवाल, हरसोलिया, हर्षवाल, हंसवाल, लामड़ीवाल, लुंडीवाल, रोलीवाल, मोरवाल, मालूण्या, मांकड़, सीकरन्या, सामलीवाल। धमाणिया, थाणक, भगोरा, धमाणिया, नाणावाल, त्तोनगुरिया, बुचर, नशपाल, जंगहारा, जले-सरिया, खरेडवाल, घामर, घुमा, चोईवाल, झरवाल, मेरानिया, कसारिया बोतरिया, नोथरिया, निमाणिया, छेमीवाल, भगरवाल, निमाणिया, कट्रासणवाल।

विवाह-सम्बन्धी कुछ आवश्यक बातें

(१) विवाह में आशौचादि की सम्भावना हो तो १० दिन^१ प्रथम नान्दी श्राद्ध करना चाहिये। नान्दीश्राद्ध के बाद विवाह समाप्ति तक आशौच होने पर भी वर-वधू को और उनके माता-पिता को आशौच नहीं होता।

(२) नान्दीश्राद्ध के प्रथम भी विवाह के लिये सामग्री तैयार होने पर आशौच प्राप्ति हो तो प्रायशिच्चत करके विवाहकर्म होता है। ^२“कूज्माण्ड सूक्त” से।

हवन, गोदान और पञ्चगव्य प्राशन इसका प्राशिच्चत है।

(३) विवाह के समय हवन के पूर्व अथवा मध्यमें वा प्रारम्भ में कन्या यदि रजस्वला हो जाने पर कन्या को स्नानकरा कर “युञ्जान”^३ इस मन्त्र से हवन करके अवशिष्ट कर्म करना चाहिये।

१ सं० ८०—“एकविशत्यर्हयज्ञे विवाहे दशवासराः। त्रिषट् चीलोपनयने नान्दी श्राद्धं विधीयते”॥

२ प्रायशिच्चतं तु विष्णूवतं बोध्यम्—“अनारब्ध विशुद्धयं कूज्माण्डैर्जुर्हयाद्धृतम्। गां द्वातपञ्चगव्याशी ततः शुद्धयति सूतकी”॥

कूज्माण्ड हवन विधिस्तु अस्मत्पितृकृत शांतिप्रकाशे द्रष्टव्यः।

३ मन्त्रस्वरूपम्—“३५ युञ्जानः प्रथमं मनस्तत्त्वाय सविताधियः। अग्नेऽर्जोति निचाय्यपृथिव्या ५ अद्याभरत्”॥ यज्ञपाश्वे—“विवाहे वितते तन्त्रे होमकाले उपस्थिते। कन्यामृतुमतीं दृष्ट्वा कथं कुर्वन्ति याज्ञिकाः॥ स्नापयित्वा तु तां कन्यामर्चयित्वा यथाविधि। युञ्जानामाहुर्ति हुत्वा ततः कर्मणि योजयेत्”॥ “युञ्जानः प्रथमम्” इति मन्त्रेणाहुर्ति हृत्वेत्यर्थः।

(४) वधू और वरके माता को 'रजोदर्शन की सम्भावना हो तो नान्दीश्राद्ध दश दिन प्रथम कर लेना चाहिये । नान्दीश्राद्ध के बाद रजोदर्शनजन्य दोष नहीं होता ।

(५) नान्दीश्राद्ध के प्रथम रजोदर्शन होने पर "श्रीशान्ति" करके विवाह करना चाहिये ।

(६) वर वधू की माता के ३रजस्वला अथवा सन्तान होने पर "श्रीशान्ति" करके विवाह हो सकता है ।

(७) विवाहमें ३आशौच की सम्भावना हो, तो आशौच के प्रथम अन्न का संकल्प कर देना चाहिये । फिर उस संकल्पित अन्न का दोनों पक्ष के मनुष्य भोजन कर सकते हैं, उसमें कोई दोष नहीं हैं । परिवेषण असगोत्र के मनुष्यों को करना चाहिये ।

(८) विवाह में वर-वधू का ४ग्रन्थिबन्धन कन्यादान के पहले ही शास्त्र विहित है, कन्यादान के बाद नहीं । कन्यादाता का अपनी स्त्री के साथ ग्रन्थिबन्धन कन्यादान के प्रथम होना चाहिये ।

१ मनु—“वधूवरान्यतरयोर्जननी चेद्रजस्वला । तस्याः शुद्धे: परं कायं माङ्गल्य भनुरबवीत् ।”

भाधवीये च—“प्रारम्भात्प्राग्विवाहस्य माता यदि रजस्वला । निवृत्तिस्तस्य कर्तव्या सहत्वश्रुति चोदनात् ॥” प्रारम्भात्प्राग्गिति नान्दीश्राद्धात्प्राग्गिति ज्ञेयम् ।

२ कष्ठद्विकारिकासु—“सुतिकोदक्ययोः शुद्धयै गां दद्याद्वैमपूर्वकम् । प्राप्ते कर्मणि शुद्धिः स्यादितरस्मिन्न शुद्धयति ॥ अलाभे सुमुहूर्तस्य रजोदोषे च सञ्ज्ञते । श्रियं सम्पूज्य तत्कुर्यत्पाणिग्रहण मञ्जलम् ॥ हैमीं माषपितां पद्मां श्रीसूक्तं विधिनाऽर्चयेत् । प्रत्यृचं पायसं हुत्वा अभिषेकः समाचरेत् ॥”

३ बृहस्पतिः—“विवाहोत्सवयज्ञेषु त्वन्तरामृतसूतके । पूर्वसंकल्पितार्थेषु न दोष-परिकीर्तिः ॥”

षट्ट्रिंशत्मते—“विवाहोत्सवयज्ञेषु त्वन्तरामृतसूतके । पररक्षं प्रदातव्यं भोक्तव्यं च द्विजोत्तमैः ॥ व्रतयज्ञविवाहे पु श्राद्धे होमेऽर्चने जपे । प्रारब्धे सूतकं न स्यादनारब्धे तु सूतकम् ॥”

प्रारम्भश्च तेनवोक्तः—“प्रारम्भो वरणं यज्ञे संकल्पो व्रतसत्रयोः । नान्दीमुखं विवाहादी शाद्वे पाक परिकिया” इति ॥ वरणमिति मध्युपर्कपरम् ।

४ तथा च योगियाज्ञवल्क्यः—“कन्यकासुदशो पाश्वे द्रव्यपुष्पाक्षतादिकम् । निक्षिप्य तच्च सम्बद्ध्य वरवस्त्रेण संयुजेत् ॥ वस्त्रीः संयोज्य तौ पूर्वं कन्यादानं समाचरेत् । दानेन युक्तयोः पश्चाद्विदध्यात्पाणिपीडनम्” ॥

(९) दो कन्या का एक समय विवाह हो सकता है परन्तु एक साथ नहीं, किन्तु एक कन्या का वैवाहिक कृत्य समाप्त होने पर द्वार-भेद और आचार्य भेद से भी हो सकता है।

(१०) एक समय में दो शुभ-कर्म करना उत्तम नहीं है। उसमें भी कन्या के विवाह के अनन्तर पुत्र का विवाह हो सकता है और पुत्र-विवाह के अनन्तर पुत्री का विवाह छ मास तक नहीं हो सकता।

(११) एक वर्ष में सहोदर भाई अथवा बहनों का विवाह शुभ कारक नहीं। वर्ष भेद में और संकट में कर सकते हैं।

(१२) समान ^१गोत्र और समान प्रवर वाली कन्या के साथ विवाह निषिद्ध है।

(१३) विवाह के बाद एक ^२वर्ष तक पिण्डदान, मृत्तिका स्नान, तिलतर्पण, तीर्थयात्रा, मुण्डन, प्रेतानुगमन आदि नहीं करने चाहिये।

(१४) विवाह में ^३छिक्का (छींक) का दोष नहीं है।

(१५) विवाहादिक कार्यों में ^४स्पशस्पर्श का दोष नहीं होता।

१ समानार्थ गोत्रजाविवाहे प्रायश्चित्तमाह शातातपस्मृतौ – “परिणीय सगोत्रां तु समान-प्रवरां तथा । त्यागं कुर्याद् द्विजस्तस्यास्ततश्चान्द्रायणं चरेत्” ॥

त्यागश्चोपभोगस्यैव न तु तस्याः, तथा च मनुः—“असपिण्डा च वा मातुरसगोत्रा च या पितुः । सा प्रशस्ता द्विजातीनां दारकर्मणि मैथुने ॥”

२ हेमाद्री – “विवाहे ब्रतचूडासु वर्षमर्द्द तदद्वकम् । पिण्डदानं मृदास्तानं न कुर्यात्तिलतर्पणम्” ॥ तिलतर्पणमृद्यितर्पणस्योपलक्षणम् ॥

३ “आसने शयने दाने भोजने वस्त्रसंग्रहे । विवादे च विवाहे च क्षुतं सप्तसुशोभनम्” ॥

४ “तीर्थे विवाहे यात्रायां संग्रामे देशविप्लवे । नगरग्रामदाहे च स्पृष्टास्पृष्टिन् दुष्प्रति” ॥

“स्त्रियो वृद्धाश्च बालाश्च मक्षिका मशकादयः । मार्जारश्चैव दर्वीच मारुतश्च सदा-शुचिः” ॥

“दीर्घकाठे शिलापृष्ठे नौकायां शक्टे तटे । विवाहे वहुसम्पर्कं स्पशंदोषो न विद्यते” ॥

“लबणे मधुमांसे च पुष्पमूलफलेषु च । शाककाठतृणेष्वप्सु दधिसर्पिणयः सु च ॥ तिलौ-घधाजिने चैव पक्वापक्वेस्वयं ग्रहः । पर्णेषु च सर्वेषु नाशीं च मृतसूतके” ।

अत्रिस्मृतौ—“देवयात्राविवाहेषु यज्ञप्रकरणेषु च ।

उत्सवेषु च सर्वेषु स्पृष्टास्पृष्टं न विद्यते” ॥*

(१६) विवाहादि कार्यों में चतुर्थ^३, द्वादश^४ चन्द्रमा ग्राह्य है।

(१७) विवाह में छट, अष्टमी, दशमी, शुक्लपक्ष की प्रतिपदा रिक्ता^३ आदि तिथि निषिद्ध है।

विवाह—सामग्री

रोली	लालबस्त्र हाथ २	शंख १
भोली (नाल) ११	सर्वोषधी १० पै.	पर्वत फल (लोडी) १
पान ११	सिन्धूर „ „	ओकणी पात्र १
सुपारी ११	गुलाल „ „	अणीता पात्र १
गुड ५।।	सरसों, „ „	चुवो १
चावल ५।।	चावलों की खील.	हुलदी (पिसी हुई)
केशर	जनेऊ जोड़ा ५	मेहदी (पिसी हुई)
चन्दन चक्को	नारियल १	चंवरी का डोका ४
मुछ	पातल	काचोसूत
हूब	पञ्चपल्लव	कलश १
पुष्पमाला	सप्तमृत्तिका	डोवसो १
धूपधत्तिपूड़ो १	गंगाजल	सराई २५
लड्ड	आचार्यवरण वस्त्र	कुंडो १
दियासलाई (पेटी) १	बहावरण वस्त्र	(कच्चा बालन्दडा) ४
लाडू ५।।	वर वस्त्र दृय	काठकी खूंटो ४
पेड़ा ५।।	कन्या वस्त्र दृय	होम समिधा
लूंग	गेहूं	शुद्ध बालुका (बेकरों)
इलायची	गेहूं को चून	शमीपत्र (खेजड़ीका पत्ता)
पंचमेवा ५।	सोनेको टिकड़ो २	चोकी २
ऋतुफल ५।।	पञ्चरत्न पुड़िया १	पाटियो १
दूध	सुवर्णाङ्गुलीय	आरते की थालो
वही	काँसीको कचोली ४	सोडियो १ (गदी) २
शहद	काँसीको कचोलो १	गोदान
गोघृत ५।।।	पूर्णपात्र का टोपिया २	सुवर्णदान
चीणी	पीतल को लोटो १	रेजकी
गोमय	तामेकी लोटो १	रोकड़ी
सफेदवस्त्र—हाथ २	तामेकी तामड़ी १	
	शूर्प (छाजलो)	



*व्याघ्रपाद स्मृतौ—“तीर्थयात्रा विवाहेषु संग्रामे देवतालये ।
उपनीतोत्सर्जनेषु स्पृष्टास्पृष्टं न विद्यते” ॥

आचार द०—“कुण्डे मञ्चे शिलापृष्ठे नौकायां गजवृक्षयोः ।
संग्रामे संकमे चैव स्पर्शं दोषो न विद्यते” ॥

१ “विवाह चूडा व्रतवंध दीक्षा सीमंत कर्माणि वधू प्रवेशः । नवान्न भोजे च गृह प्रवेशश्चतुर्थ-
चन्द्रः शुभकान्तिदः स्यात्” ॥*

१ सूर्यपूजादान सामग्री	२ गुरुपूजादान सामग्री	३ चन्द्रपूजादान सामग्री
लालवस्त्र हाथ २	अश्वका मूल्य	सफेद वस्त्र
गुड़	सुवर्णमासा २	शंख १
सुवर्णमासा २	मधु	मोती
तामेका कलश १	पीतवस्त्र	सुवर्णमासा २
लालमणी	चणां की दाल	चान्दीकी मूर्ति
गेहूं	सैन्धवनमक	दधि
रक्तपुष्प	पीतपुष्प	घृतकलश
रक्तचन्दन	मिश्री	चावल
मसूरकी दाल	हलदी	दान प्रतिष्ठा
घेनु मूल्य	दान प्रतिष्ठा	
दान प्रतिष्ठा		

सूर्यपूजादानसङ्कल्पः

वर हाथमें चावल लेकर संकल्प करे—

“मम अद्य करिष्यमाणविवाहसंस्कारकर्मणि जन्मराशेः सकाशान्नामराशेः सकाशाद्वा अमुकानिष्टस्थानस्थित श्रीसूर्यजनित दोषपरिहारपूर्वकशुभफलप्राप्त्यर्थमायुरारोग्यार्थं श्रीसूर्यनारायणप्रीत्यर्थं च इमानि यथाशक्ति दानोपकरणानि अमुकगोत्राय अमुकशर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे” ।

संकल्प कर ब्राह्मण के हाथमें देवे ।

१ संस्कारभास्करे:—“कौसुंभवस्त्रं गुडहेमताऽन्नं माणिकयगोधूमसुवर्णपद्मम् । सवत्सगोदानमिति प्रणीतं दुष्टाय सूर्याय मसूरिकाच्” ॥ १ ॥

२ “अश्वं सुवर्णं मधुपीतवस्त्रं सपीतधान्यं लवणं सपुष्पम् । सशर्करं तद्रजनीप्रयुक्तं दुष्टोपशान्त्ये गुरवे प्रणीतम्” ॥ २ ॥

३ “घृतकलशं सितवस्त्रं दधिशंखं मौकितकं सुवर्णं च । रजतं च प्रदद्याच्चन्द्रारिष्टोपशान्तये त्वरितम्” ॥ ३ ॥

* २ द्वादश चन्द्रे विशेष:—“उत्सवे चाभिषेके च जनने व्रतवंधने । पाणिग्रहे प्रयाणे च शाशीद्वादशगः शुभः” ॥ ३ रत्नकोशे—“षष्ठी दशाष्टमी रिक्ता कृष्णपक्षान्त्य पञ्चके । शुक्ला च प्रतिपन्नेष्टस्तिथयोज्ये तु शोभना ॥ १ ॥ रिक्तासु विशेष:—“रिक्तासु विघवा कन्या दर्शेष्यि स्याद्विवहिता । शनैश्चरदिने चैव यदा रिक्ता तिथिर्भवेत् । तस्मिन्विवहिता कन्या पतिसन्तानवद्विता” ॥

ब्राह्मण कहे—“ॐ स्वस्ति ।”

दाता अपने दक्षिण हाथमें दानप्रतिष्ठा के लिये दक्षिणा लेकर—
“अद्य कृतैतत्सूर्यदानप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थमिदं रजतं चन्द्रदैवतं यथानामगो-
त्राय ब्राह्मणाय दातुमहमुत्सृज्ये ।”

ब्राह्मण को देवे ।

ब्राह्मण कहे —“ॐ स्वस्ति”

गुरुपूजादानसङ्कल्पः

यजमान दक्षिण हस्तमें जल अक्षत लेकर संकल्प करे—

“मम अस्या अमुकनाम्न्याः कन्यायाः करिष्यमाण विवाह-
संस्कारकर्मणि जन्मराशेः सकाशान्नामराशेः सकाशाद्वा अमुका-
निष्टस्थानस्थित श्रीगुरुजनितदोषनिवृत्तिपूर्वकशुभफलप्राप्त्यर्थं
सौभाग्यायुरारोग्यार्थं श्रीगुरुप्रसन्नतार्थं इमानि यथाशक्ति दानो-
पकरणानि अमुकगोत्राय अमुकशर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे ।”

ब्राह्मण के हाथमें देवे ।

ब्राह्मण कहे—“ॐ स्वस्ति ।”

फिर दानप्रतिष्ठा के लिये दक्षिणा लेकर—

“अद्य कृतैतत् श्रीगुरुदानप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थमिदं द्रव्यं रजतं चन्द्र-
दैवतममुकगोत्राय अमुकशर्मणे ब्राह्मणाय दातुमहमुत्सृज्ये” ।

“ॐ स्वस्ति” । ब्राह्मण कहे ।

चन्द्रपूजादानसङ्कल्पः

यजमान और वर देशकालका संकीर्तन करे—

“मम अस्या अमुकनाम्न्याः कन्यायाः (मम) करिष्यमाण

विवाहकर्मणि जन्मराशेः सकाशाच्चतुर्थाद्यनिष्ट स्थानस्थित चन्द्रेण
सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशार्थं सर्वदा तृतीयै-
कादश शुभस्थानस्थितवदुत्तमफलप्राप्त्यर्थमायुरारोग्यार्थं श्रीचन्द्र-
देवप्रसन्नतार्थं इमानि यथाशक्ति दानोपकरणानि अमुकगोत्राय अमुक-
शर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे” ।

ब्राह्मण के हाथमें देवे ।

ब्राह्मण कहे—“ॐ स्वस्ति”

फिर जलाक्षतदक्षिणा हाथमें लेकर—

“अद्य कृतैतत् श्रीचन्द्रदानप्रतिष्ठासिद्धचर्थमिदं द्रव्यं रजतं चन्द्र-
दैवतममुकगोत्राय अमुकशर्मणेब्राह्मणाय दातुमहमुत्सृज्ये” ।

ब्राह्मण कहे—“ॐ स्वस्ति” ।

ग्रन्थकारस्य सप्त पुरुषात्मकः

कल्पतरयम् ।

गजानन्द—गोविन्द, जगदीश, नरेन्द्र
महादेव—गंगाधार^१

^२चतुर्थीलाल—गुरुमुखराय

चतुर्भुज—^३कस्तूरीचन्द्र—जेठमल

^४रामकृष्ण—अमरचन्द्र—गुमानीराम—
चनीराम—लालचन्द्र

^५जीवराज—रामनारायण

^६रामदत्त

^७नाथूराम

श्रीशुक्लयजुर्वेद—माध्यन्दिनीयशाखा—

वशिष्ठशाक्त्यपाराशरास्त्रयः प्रवराः ।

केषाच्छिन्मते—वशिष्ठात्रिसाङ्गृतयस्त्रयः प्रवराः ।

**ਛਮਾਰੇ ਯਹੌਂ ਦੇ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਿਤ ਹੋਨੇ ਵਾਲੇ
ਕਰਮਕਾਣ ਵਿ਷ਯ ਦੇ ਅਨ੍ਯ ਗੁਣਥ।**

ਅਨੱਤੀਏ਷ਟਿਸ਼ਾਦਕਰਮਪਦਤਿ- (ਮੂਲਮਾਤਰ, ਸੰਸਕ੍ਰਤ ਮੌ) -

ਉਪਾਕਰਮਪਦਤਿ- ਮੂਲ ਸੰਸਕ੍ਰਤ ਮੌ - (ਚਾਤੁਰ्थੀਲਾਲੀ) ਸਟਿਪਣਿਕਾ। ਗੈਡਪਿਡਤ ਸ਼੍ਰੀਗੜਾਧਰ
ਚਾਤੁਰਥੀਲਾਲਜੀ ਸ਼ਰਮਣਾਂ ਸੰਕਲਿਤਾ।

(ਚਾਤੁਰਥੀਲਾਲੀ) ਉਪਨਾਨਪਦਤਿ - ਸਟਿਪਣਿਕਾ। ਸੰਸਕ੍ਰਤ ਮੌ। ਸਫ਼ਲਨਕਰਤਾ ਗੈਡਪਿਡਤ
ਸ਼੍ਰੀਗੜਾਧਰ ਚਾਤੁਰਥੀਲਾਲਜੀ ਸ਼ਰਮਾ।

ਏਕੋਦਿ਷ਟਸ਼ਾਦਖਾਵਿਧੀ- ਹਿੰਦੀ ਟੀਕਾ ਸਹਿਤ।

ਅਵਹਸਾਨਿਤ- (ਸ਼ੁਕਲਾਵਿਧੀ) ਹਿੰਦੀ ਟੀਕਾ ਸਹਿਤ। ਇਸ ਮੌ ਮਾਤ੍ਰਕਾਸਥਾਪਨ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੈ।

ਗੌਡੀਯਸ਼ਾਦਖਾਵਿਧੀ- (ਸ਼ਾਦਖਪਦਤਿ) ਸ਼ਾਦ ਮੌ। ਚਾਤੁਰਥੀਲਾਲਜੀ ਕ੃ਤ। (ਮੂਲਮਾਤਰ ਸੰਸਕ੍ਰਤ ਮੌ)
ਸ਼ਾਦਸ਼ਵਰੂਪ, ਸ਼ਾਦ ਮੌ ਬਾਹਣਲਕਣ, ਮਹਾਲਿਆਦਿ ਨਿਰਣਿ, ਸ਼ਾਦਪ੍ਰਯੋਗ, ਕਥਾਹਸ਼ਾਦ,
ਸਫ਼ਲਲਿਪਸ਼ਾਦ, ਹੇਮਸ਼ਾਦ, ਏਕਾਦਸਾਹਿਦਸ਼ਾਦ, ਮਾਸਿਕਸ਼ਾਦ, ਮਧਾਦਿਸ਼ਾਦ ਤਥਾ
ਨਾਨੀਸ਼ਾਦਾਦਿ ਸਥ ਸ਼ਾਦ, ਪਿਤੁਕਰਮ ਸਮਵਨਧੀ ਵੈ਷ਣਵਾਦਿ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੈ।

ਜਨਮਦਿਨਪ੍ਰਾਪਤਿ- (ਮੂਲ-ਸੰਸਕ੍ਰਤ ਮੌ) ਅਰਥਾਤ् ਪ੍ਰਾਪਤ ਵਰ਷ ਦੇ ਜਨਮਦਿਨ ਮੌ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੈ।

ਤੁਲਸੀਵਿਵਾਹਵਿਧੀ- (ਪਦਤਿ) - ਸ਼ਵ. ਪ. ਚਾਤੁਰਥੀਲਾਲਜੀ ਕ੃ਤ, ਸੰਸਕ੍ਰਤ ਮੌ।

ਤੁਲਸੀਪ੍ਰਾਪਤਿ- ਸੰਸਕ੍ਰਤ ਮੌ।

ਦਸ਼ਕਰਮਪਦਤਿ- ਹਿੰਦੀ ਟੀਕਾ ਸਹਿਤ। ਗਭਧਾਨਾਦਿ ਵੈਦਿਕ ਸੰਸਕਾਰਾਂ ਦੇ ਤੇਵੇਂ ਮਨਤ੍ਰਾਂ ਦਾ ਅਰਥ
ਸਰਲ ਵ ਸੁਨਦਰ ਹਿੰਦੀ ਭਾਸਾ ਮੌ।

ਨਵਗੁਹਕਾਣਡੀ- ਨਿਤ ਪ੍ਰਾਪਤ ਵਿਧਾਨ ਪਦਤਿ। ਵੈਦਿਕ ਮਨਤ੍ਰਾਂ ਦੀ ਸੰਸਕ੍ਰਤ ਟੀਕਾ ਵ ਹਿੰਦੀ
ਟੀਕਾ ਸਹਿਤ।

ਨਵਗੁਹਜਪਵਿਧੀ- ਹਿੰਦੀ ਟੀਕਾ ਸਹਿਤ। ਨਵਗੁਹਸਾਨਿਤ, ਨਵਗੁਹਧਿਧਾਨ, ਨਵਗੁਹਸਤੋਤ੍ਰ ਔਰ
ਗਣਪਤੀ ਮਨਤ੍ਰ ਜਪਵਿਧੀ ਸਹਿਤ।

ਨਾਰਦਪਤ੍ਰਾਤ੍ਰ- (ਭਾਰਦਾਜ ਸਹਿਤਾ) ਸ਼੍ਰੀ. ਪ. ਬਾਬੂਲਾਲ ਸ਼ੁਕਲ ਸ਼ਾਸਤ੍ਰੀ ਏਮ. ਏ. ਸਾਹਿਤਿਆਚਾਰ੍ਯ -
ਕਾਲਿਦਾਸ ਅਕਾਦਮੀ ਸ਼ੋਧ ਵਿਭਾਗਾਚਾਰ੍ਯ ਦ੍ਰਾਰਾ ਸਮਾਦਿਤ ਤਤਤ੍ਵਪ੍ਰਕਾਸ਼ਿਕਾ ਅਭਿਨਵ
ਹਿੰਦੀ ਟੀਕਾ ਸਹਿਤ।

ਨਾਰਾਯਣਬਲਿ- (ਮੂਲਮਾਤਰ) ਸੰਸਕ੍ਰਤ ਮੌ।

ਨਿਤਿਕਰਮਪਦਤਿ- ਬਹੁਤ ਉਪਯੋਗੀ ਛੋਟਾਸਾ ਗੁਣਥ। ਸੰਸਕ੍ਰਤ ਮੌ।

ਨਿਤਿਕਰਮਪ੍ਰਯੋਗਮਾਲਾ - ਸ਼ਵ. ਪ. ਚਾਤੁਰਥੀਲਾਲਜੀ ਕ੃ਤ, ਨਿਤਿਨਿਯਮ ਦੇ 6 ਵਿ਷ਯਾਂ ਸਹਿਤ।
ਮੂਲਮਾਤਰ ਸੰਸਕ੍ਰਤ ਮੌ।

ਨਿਤਿਹਵਨਪਦਤਿ- ਸੋਹਨਲਾਲ ਗੋਯਲੀਅ ਕ੃ਤ। ਹਿੰਦੀ ਟੀਕਾ ਸਹਿਤ।

पार्विणश्राद्धप्रयोग- कन्यागत सूर्य के अपरपक्ष में महालयश्राद्धप्रयोग । हिन्दी टीका सहित पूजापंकजभास्कर- केवल संस्कृत में । पाँचो देवताओं के वैदिकमन्त्रों से यथोपचार पूजा प्रकरण ।

प्रेतमञ्जरी- हिन्दी टीका सहित । इसमें वैतरणीदान, प्रेतदाहविधि, दशाहादि श्राद्ध, एकादशाहश्राद्ध, वृषोत्सर्ग, शर्यादानादि सपिण्डीश्राद्ध, षोडसमासिकश्राद्ध प्रयोग, त्रयोदशाहपददानादि भली प्रकार दर्शाया है ।

बृहत्कर्मकापडसमुच्चय- पं. दिवाकर संग्रहीत । केवल संस्कृत में । इसमें शान्तिपाठ, दीप, गणपति, वरुण, वसुधारा, मातृका, नवग्रहपूजन, वारदान, कन्यादान, गोदान, जन्मोत्सवविधि, पुण्याहवाचन, नीराजन, नान्दीश्राद्ध, षोडससंस्कार, चतुर्थीकर्म, घटपद्धति आदि विषय वर्णित हैं ।

मंगलाष्टकशार्वोच्चार- विवाह में नीतियुक्त बोलने की रीति । केवल संस्कृत में ।

मूलशान्ति- मूलनक्षत्र में जन्म का शान्तिप्रयोग । केवल संस्कृत में ।

यज्ञोपवीतपद्धति- हिन्दी टीका सहित । इसमें यज्ञोपवित का संपूर्ण संस्कार और वेदारम्भादि विषय है ।

वरदगणेशपूजा- संस्कृत में । भाद्रपद शुक्लचतुर्थी का गणेशपूजन प्रयोग ।

व्रतोद्यापनप्रकाश- (मूलमात्र संस्कृत में) स्व. पं. चातुर्थीलालजी कृत । इसमें चैत्रशुक्ल प्रतिपदा से लेकर वर्षभर के सम्पूर्ण व्रतों की अत्युत्तम पद्धति है ।

वास्तुप्रतिष्ठासंयह- (केवल संस्कृत में) पं. श्रीरामचन्द्र कृत । वास्तुविषय में अद्वितीय ग्रन्थ । वास्तुप्रतिष्ठाप्रक्रिया, वास्तुशान्तिप्रयोग, भूम्यादि पूजन, विश्वकर्मपूजन, प्रधानमूर्तिस्थापनादि, कुशकण्डिकाहवन, प्रवेशविधि, दीप, चुली, उलूखल, मुशल, सन्धानभाण्ड, जलस्थानपूजन आदि उपयोगी सभी विषय ।

वास्तुशान्तिप्रयोग- (केवल संस्कृत में) अर्थात् समस्त नूतन मकानों का वैदिक मन्त्रों से शान्तिप्रयोग ।

वासिष्ठीहवनपद्धति- हिन्दी टीका सहित । इसमें कलशादि स्थापन, गणपतिपूजन, पुण्याहवाचन, मातृकापूजन, नान्दीश्राद्ध, ग्रहमखादि सुगम रीति से दिये गये हैं ।

विष्णुपूजनविधि- हिन्दी टीका सहित । विष्णुपूजा की विधि बहुत उत्तम रीति से दी गयी है।

वैवाहपद्यावली- हिन्दी टीका सहित । अर्थात् कन्यापक्ष और वरपक्ष की उत्तमोत्तम काव्य से प्रशंसा विनती में वर्णन की है ।

विवाहसोपांगविधि- “बालबोधिनी” नामक हिन्दी टीका सहित ।

सुगमविवाहपद्धति- (गङ्गाधरी) हिन्दी टीका सहित ।

शान्तिप्रकाश- (मूलमात्र, संस्कृत में) स्व. पं. चतुर्थीलालजी कृत । इसमें गणपत्यादि

पूजन, पुण्याहवाचन, कलस्थापनादि और विनायकादि ३० शान्तिप्रयोग तथा

वास्तुशान्ति प्रयोगादि समन्त्रक है ।

सर्वदेवप्रतिष्ठाप्रकाश- (केवल संस्कृत में) स्व. पं. चतुर्थीलालजी कृत इस ग्रन्थ में सम्पूर्ण देवताओं की सर्वोत्तम प्रतिष्ठाविधि और प्रतिष्ठापयोगी अनेक प्रकार के कुण्ड, मण्डल, यन्त्र आदि के चित्र बनाने तथा रङ्ग पूरने की विधि भी है।

सकार्मशिवपूजनविधान- वैदिक, तांत्रिकमन्त्रों से शिवपूजन। हिन्दी टीका सहित।

स्वस्तिवाचन- (पुण्याहवाचन) संस्कृत में। प्रायः समस्त शुभकार्यों में पढ़ा जाता है

सर्वकारप्रकाश- (मूलमात्र संस्कृत में) स्व. पं. चतुर्थीलालजी कृत इस ग्रन्थ में षोडससंस्कार, लुप्ससंस्कारप्रायश्चित्त, व्रात्यप्रायश्चित्तप्रयोग, पुनरुपनयनाधिकारी, अङ्गबङ्गादि देशगमन, लशुनादिभक्षण, सुरापानादिप्रायश्चित्त, समुद्रयात्रा प्रायश्चित्त, कलिवर्ज्यधर्म, पुनरुपनयन प्रकार इत्यादि सभी विषय हैं।

सन्ध्योपासना- भाषा टीका – देवर्षि पितृतर्पण सहित।

सन्ध्योपासना- (सामवेदीय) मूल। संस्कृत में।

हमारे प्रकाशनों की अधिक जानकारी व खरीद के लिये हमारे निजी स्थान :

खेमराज श्रीकृष्णदास

अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,

९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,

७ वी खेतवाडी बैंक रोड कानपर,

मुंबई - ४०० ००४.

दूरभाष/फैक्स-०२२-२३८५७४५६.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,

लक्ष्मी बैंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो

श्रीलक्ष्मीबैंकटेश्वर प्रेस विल्डांग,

जूना छापाखाना गली, अहिल्यावाड़ी चौक,

कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०१

दूरभाष - ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास

६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,

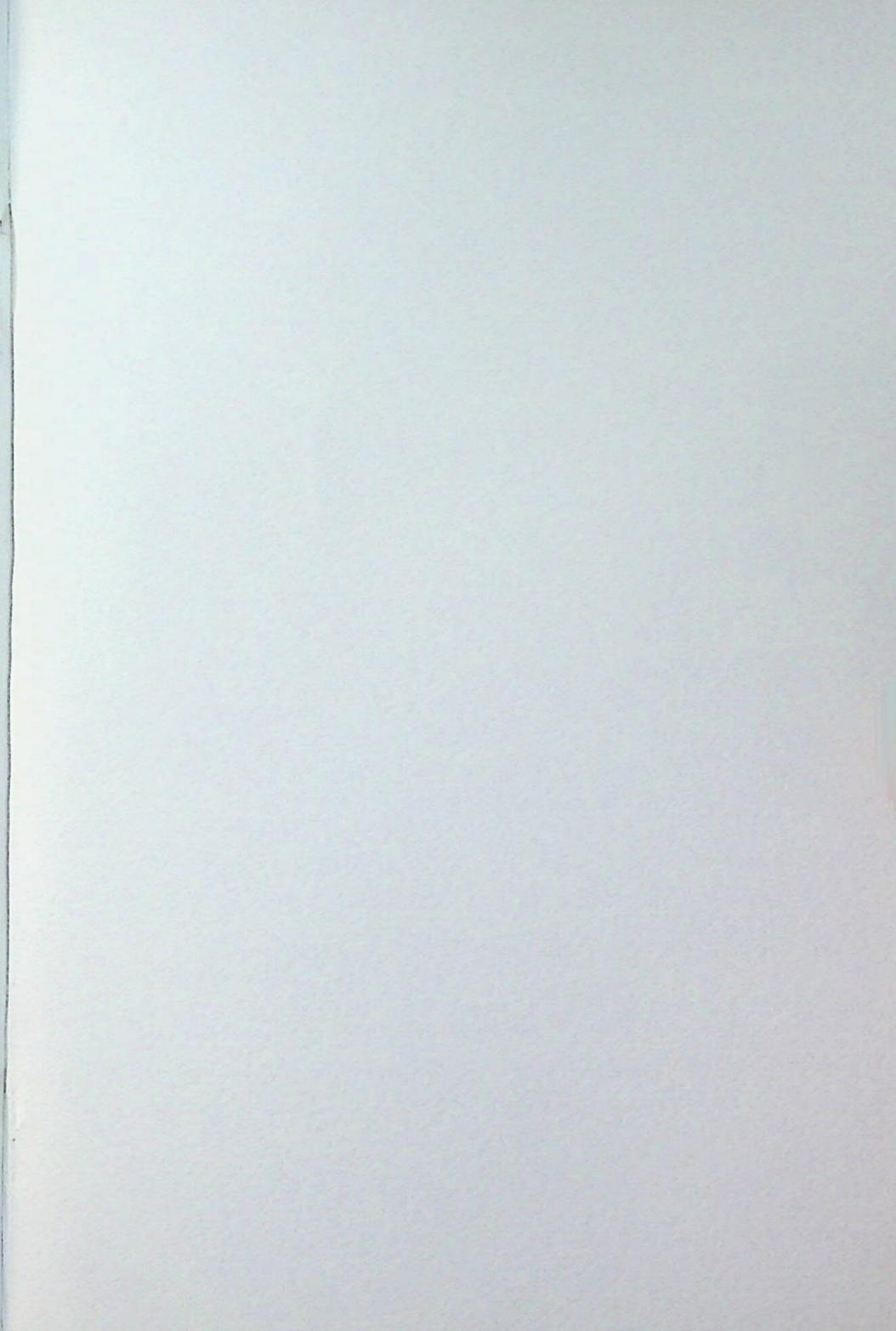
पुणे - ४११ ०१३.

दूरभाष-०२०-२६८७१०२५,

खेमराज श्रीकृष्णदास

चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.

दूरभाष - ०५४२-२४२००७८



खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीविकटेश्वर प्रेस,
११/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग
७ वी खेतवाडी बैंक रोड कानर,
मुंबई - ४०० ००४.
दूरभाष/फेक्स-०२२-२३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,
पुणे - ४११ ०१३.
दूरभाष-०२०-२६८७९०२५,

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वैंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो
श्रीलक्ष्मीवैंकटेश्वर प्रेस विल्डांग,
जूना छापाखाना गली, अहिल्याबाई चौक
कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०।
दूरभाष - ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२-२४२००७८

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS

